RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म.प्र. / भोपाल / 261 / 2015-17 प्रकाशन तिथि 25 जुलाई 2016

चकमक

बाल विज्ञान पत्रिका अगस्त 2016

देर रात, हम घर की तीसरी मंज़िल पर, छत पर बनी रसोई में होते थे। मिट्टी के चूल्हे पर लोहे की बड़ी कड़ाही में दूध उबलता रहता था। पास ही लकड़ी के पटरे पर बैठा हुआ मैं, बेसब्री से कहानी आगे बढ़ने का इन्तज़ार करता था।

पेज 32 पर

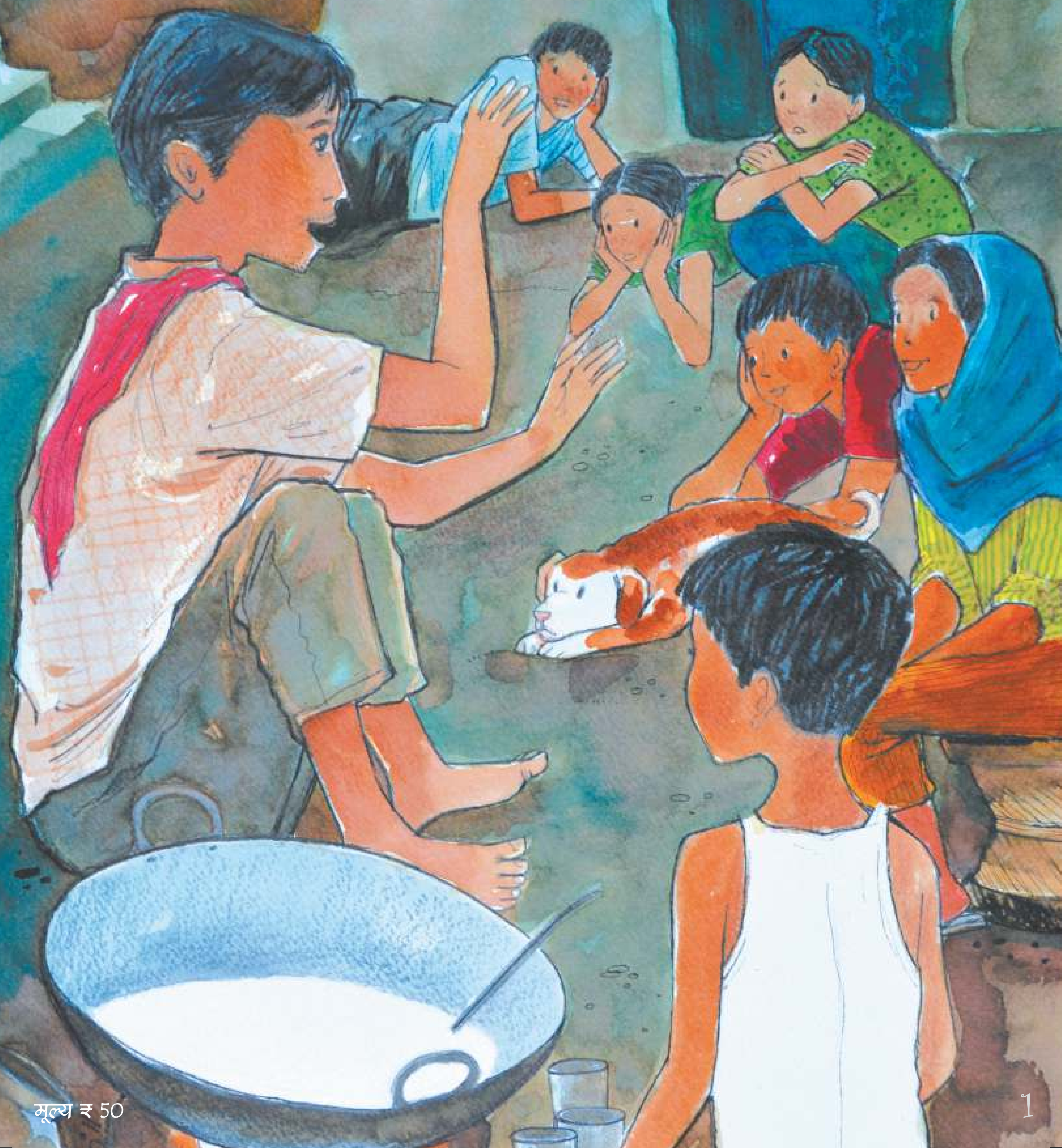

मूल्य ₹ 50

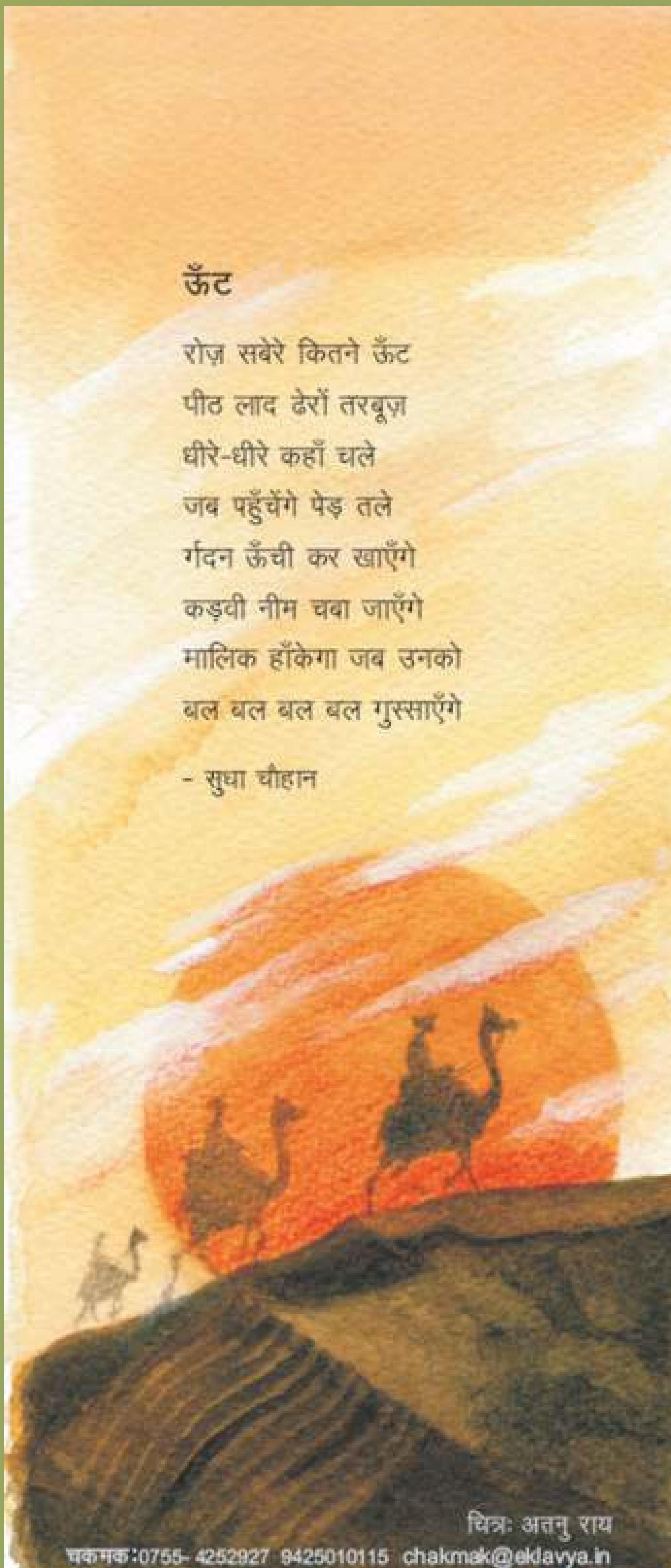

चकमक कविता कार्ड

पढ़ो और फिर चाहो तो अपने दोस्त को इसी कार्ड के दूसरी तरफ एक चिट्ठी लिखकर भेज दो।

कविता कार्ड के चार गुच्छे। एक गुच्छे में बारह कविताएँ। एक गुच्छे की कीमत है सिर्फ पचास रुपए।

इन्हें मँगाने के लिए तुम चकमक के पते पर लिख सकते हो। या हमें फोन कर सकते हो। या चाहो तो सीधे ऑनलाइन मँगा लो - Http://www.eklavya.in/pitara/chakmak_kavita_cards

बाल विज्ञान पत्रिका

चकमक

अंक 359 अगस्त 2016

इस अंक में

4 अगर मगर - बच्चों के सवाल गुलज़ार के जवाब
6 चरखी नवाब - किस्सा: हिमांशु बाजपेयी
8 अम्मा की ईद
10 रामसहाय - स्वयं प्रकाश
12 वान्या की चिट्ठियाँ...
14 द किंग एंड द लिटिल मैन - के जी सुब्रह्मण्यम
17 पहेलियाँ
18 पूड़ियों की गठरी - कृष्णकुमार
22 भाषा की पीएनजी- रमाकान्त अग्निहोत्री
24 ईचक दाना बीचक दाना... - किशोर पँवार
26 दर्ज़ी चींटियाँ - विनता विश्वनाथन
27 माथापच्ची
28 चश्मा नया है - लक्ष्मी
30 रहमत का फरिश्ता - प्रियम्वद
34 मम्मी सूसू आई है - नेहा सिंह
39 हाजी नाजी
40 मेरा पन्ना
42 झटपट नटखट - रमेश उपाध्याय
47 बासी भात तैयार करना - नासिर अहमद सिकन्दर
48 चित्र पहेली

शाख पर जब धूप आई
हाथ छूने के लिए
छाँव छम से नीचे कूदी
हँस के बोली आइए
यहाँ सुबह से खेला करती है शाम
हवाओं पे लिख दो हवाओं के नाम...

- गुलज़ार

चित्र : अतनु राय

आवरण चित्र
जोएल गिल

हाशिए के चित्र
श्वेता नम्बियार

डिज़ाइन
दिलीप चिंचालकर

सम्पादन
सुशील शुक्ल
शशि सबलोक

सहायक सम्पादक
कविता तिवारी
मिताली अहीर

विज्ञान सलाहकार
सुशील जोशी

वितरण
झनक राम साहू

सहयोग
वरुण ग्रोवर
प्रभात
मिहिर
कमलेश यादव
ब्रजेश सिंह

तक्षशिला एजुकेशन सोसाइटी के वित्तीय सहयोग से विकसित

एक प्रति :	50.00
वार्षिक :	500.00
तीन साल :	1350.00
आजीवन :	6000.00

सभी डाक खर्च हम देंगे।

चन्दा (एकलव्य के नाम से बने) मनीऑर्डर/चैक से भेज सकते हैं।
एकलव्य भोपाल के खाते में ऑनलाइन जमा करने के लिए विवरण-
बैंक का नाम व पता - स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, महावीर नगर, भोपाल
खाता नम्बर - 10107770248
IFSC कोड - SBIN0003867
कृपया खाते में राशि डालने के बाद इसकी पूरी जानकारी accounts.pitara@eklavya.in पर ज़रूर दें।

एकलव्य
ई-10, शंकर नगर, बीडीए कॉलोनी, शिवाजी नगर, भोपाल, म.प्र. 462 016, फोन: (0755) 4252927, 2550976, 2671017
फैक्स: (0755) 2551108, e mail - chakmak@eklavya.in, e mail - circulation@eklavya.in, www.chakmak.eklavya.in, www.eklavya.in

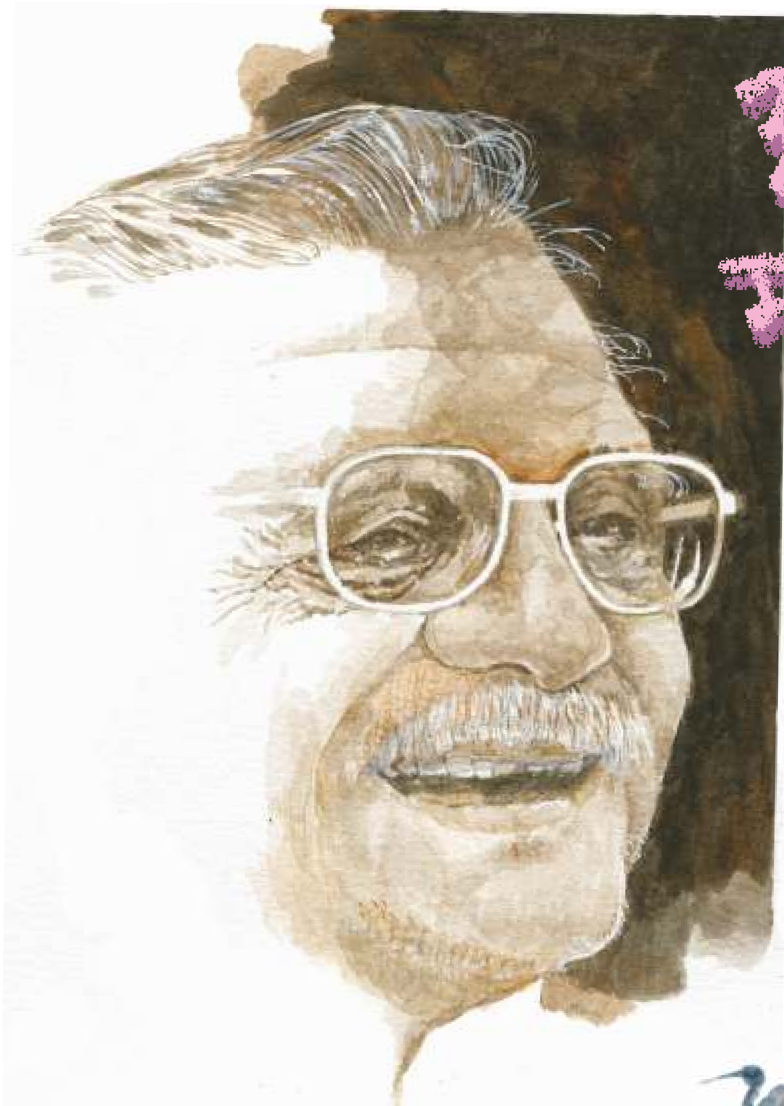

चित्रः अतनु राय

अगर मगर

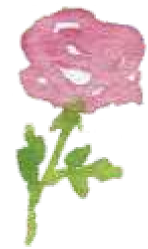

सर, क्या आप मेरे जैसी प्यारी लड़की पर कविता की चार लाइनें लिखकर दिखा सकते हैं?

-नूरेनिशाँ, बारहवीं, राजकीय बालिका इंटर कॉलेज, खटीमा, उधमसिंहनगर

- लिख सकता हूँ दिखा नहीं सकता।

आपकी बचपन की कोई याद जो आप हमसे बाँटना चाहते हैं?

- जिया केजरीवाल, छठी, डीपीएस सूरत

- हाँ, जब मैं छोटा था मैं भी छठी जमात में पढ़ता था।

अगर भगवान ने इंसानों को बनाया तो भगवान को किसने बनाया?

- पूजा हालदार, ग्यारहवीं, केन्द्रीय विद्यालय क्र.1, कांचरापाड़ा, पश्चिम बंगाल

- इंसानों ने।

एक अच्छा दोस्त बनने के लिए क्या करना होगा?

- नायसा तेजस कापाड़िया, छठी, डीपीएस सूरत

- मुझे तो आपसे मिलना होगा।

दवा कड़वी ही क्यों होती है?

- सार्थक, सातवीं, केन्द्रीय विद्यालय, देहरादून

मुँह का मज़ा खराब करने के लिए। कभी बीमार मत पड़ना।

मृत्यु के बाद का जीवन हम क्यों नहीं जान पाते?

- बिपाशा घोष, ग्यारहवीं, केन्द्रीय विद्यालय क्र.1, कांचरापाड़ा, पश्चिम बंगाल

- मरने पर आँखें बन्द कर देते हैं न इसलिए।

आप पाकिस्तान में पैदा हुए थे तो आपने रहने के लिए भारत को क्यों चुना?

- अनुषा अग्रवाल, छठी, डीपीएस सूरत

- किसी ने मेरी राय नहीं पूछी।

समय कैसे चलता है?

- हरप्रीत सिंह, सातवीं, राजकीय मा. विद्यालय धर्मापुरा, सिरसा, हरियाणा

- दो सुइयों पर।

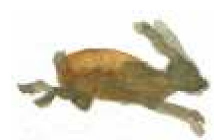

उस आदमी को आप क्या कहेंगे जिस के सिर पर घास उगी हो?

- अमृता चौकसे, दसवीं, शा.उ.मा. विद्यालय, अनूपपुर (म.प्र.)

- क्या पहनता है? खाद या खादी?

केवल इंसान ही पकाकर भोजन करता है, ऐसा क्यों?

- आकाश, नवीं, राजकीय हाईस्कूल भिताई, पौड़ी गढ़वाल

- मज़े और हाज़मे के लिए।

किस्सा चर्खी नवाब का

किस्साः हिमांशु बाजपेयी

चर्खी नवाब की दास्तान पुराने दास्तानगो मज़े लेकर सुनाते थे। यह एक नवाब साहब की रूदाद थी जिन्हें लम्बी-लम्बी हाँकने की आदत थी। इस आदत ने नवाब साहब को लखनऊ में खूब रुसवा करवाया था। जहाँ नवाब साहब कुछ कहते तो लोग चर्खी लपेटने का इशारा करने लगते। इस वजह से उनका नाम ही चर्खी नवाब पड़ गया था। बेगम भी नवाब साहब की गप्पों से बहुत परेशान थीं। एक सुबह चर्खी नवाब बेगम से बोले कि मैं लखनऊ छोड़कर जा रहा हूँ। अब उसी दिन लखनऊवालों को अपना मुँह दिखाऊँगा जिस दिन ज़बान पर काबू पा लूँगा। शाम होते-होते चर्खी नवाब ने एक गठरी के साथ लखनऊ छोड़ दिया। बेगम को रात भर नींद न आई। सुबह जब वो अपने कमरे से बाहर निकलीं तो उन्होंने देखा कि नवाब साहब आराम से दालान में सो रहे हैं। उन्होंने जगाकर पूछा कि इतनी जल्दी सुधर गए? नवाब साहब बोले, "अमां यहाँ जान पे बन आई, आपको सुधरने की पड़ी है।" बेगम ने पूछा, "हुआ क्या?" अब नवाब साहब ने अपनी दास्तान शुरू की...

यहाँ से निकलकर मैं खरामा-खरामा सीधा तराई के जंगलों में पहुँच गया। फिर भूख लगी। अभी गठरी खोली ही थी कि सामने से एक बत्तीस हाथ लम्बा भारीभरकम शेर आ गया जिसके मुँह में हाथी के दाँत लगे थे। उसे देखकर मुझे पसीना आ गया। आना ही था। मैं गरम-मिज़ाज जो ठहरा। मैंने बन्दूक निकाली और चाहा के कमबख्त को गोली मार दूँ। फिर ख्याल आया कि निहत्थे से निहत्था ही लड़ा जाना चाहिए। सोचा कि इसे ज़मीन पे पटक के मारूँ मगर फिर लगा कि बेचारे की जान लेने से क्या हासिल! बेकार में पाप पड़ेगा। ये सोचकर मैं वहाँ से हटने लगा। मगर शेर ने मुझे पीछे हटता देखकर दौड़ा लिया। छिपने की कोई जगह नहीं थी। मगर मैं भी ठहरा बचपन का होशियार। सामने चने का सौ फुट ऊँचा एक तनावर दरख्त नज़र आया। मैं पलक झपकते उसकी फुनगी पर जा बैठा। अब शेर क्या कर पाता! नीचे खड़ा-खड़ा दहाड़ता रहा। मगर बदकिस्मती से गलत वक्त पर बदन ने अपना पानी कम करने का तकाज़ा किया। अब जो मैंने ऐसा किया, शेर बहता पानी पकड़कर ऊपर चढ़ने लगा। मगर मैं भी कहाँ कम था! अपने-आपको फौरन रोक दिया। शेर बेचारा आधे रास्ते से वापस ज़मीन पे जा गिरा और अल्लाह को प्यारा हो गया। मगर मुसीबत कम नहीं हुई। शेर के गिरने से ऐसा भयानक ज़लज़ला आया कि वो सौ फुट का चने का पेड़ जिसकी फुनगी पर मैं बैठा था, मेरे ऊपर ही गिरने लगा। वो तो कहिए सही वक्त पर मैंने ज़मीन पर लेटे-लेटे दोनों पैर हवा में उठाए और पेड़ को अपने पैरों पर रोक लिया। फिर मैंने पैरों के ज़ोर से उस पेड़ को आसमान में उछाल दिया और भागते-भागते रात ही में यहाँ आ गया।

बेगम ने सर पीटते हुए कहा, "आपका कुछ नहीं हो सकता।"

चित्र : प्रिया कुरियन

अम्मा की ईद

बात उन दिनों की है जब हम बहुत छोटे थे। जब अब्बा की दिहाड़ी के चौदह रुपए पूरी तरह खत्म हो जाते तब अम्मा हमारा पसन्दीदा पकवान तैयार करतीं। तरकीब ये थी कि सूखी रोटियों के टुकड़े कपड़े के पुराने थैले में जमा होते रहते। और महीनों के आखिरी दिनों में उन टुकड़ों की किस्मत खुलती। पानी में भिगोकर उन्हें नर्म किया जाता। फिर एक-दो मुट्ठी बची हुई दालों और सिलबट्टे पर पिसे हुए मसालों के साथ इन्हें पतीले में पकने को छोड़ दिया जाता। पककर वो एकदम मज़ेदार “हलीम-सा” बन जाता। हम सब बच्चे उँगलियाँ चाटकर उसे खतम कर जाते। अम्मा के लिए पतीले की तह में लगे कुछ टुकड़े ही बचते। उनका कहना था, “खुरचन का मज़ा तुम लोग क्या जानो!” अम्मा ऐसी सुघड़ थीं कि एक दिन गोभी पकातीं तो अगले दिन उसी गोभी के पत्तों और डण्ठलों की सब्ज़ी बना देतीं। और ये कहना मुश्किल हो जाता कि गोभी मज़ेदार थी कि डण्ठलों की सब्ज़ी?

अम्मा जब बाज़ार जातीं तो इस्लाम दर्ज़ी की दुकान के कोने में पड़ी कतरनों की पोटली बना लातीं। कुछ अरसे बाद ये कतरनें तकिए के नए गिलाफों में भर दी जातीं। क्यूँकि बकौल अम्मा एक तो महँगी रूई और फिर रूई के तकियों में ज़रासीम (किटाणु) बसेरा कर लेते हैं। कतरनों से भरे तकियों में अम्मा रंग-बिरंगे धागों से फूल-पत्ती काढ़ देती थीं। कभी जब लाड़ आ जाता तो कहतीं, “तुम शहज़ादे-शहज़ादियों के तो नखरे भी निराले हैं। सोते भी फूलों पर सर रखकर हो।”

ईद के मौके पर मोहल्ले भर के बच्चे इस्लाम दर्ज़ी से कपड़े सिलवाते। हम ज़िद करते तो अम्मा कहतीं कि वो तो मजबूरी में सिलवाते हैं क्यूँकि उनके घरों में किसी को सीना-पिरोना नहीं आता। मैं तो अपने शहज़ादे-शहज़ादियों के लिए हाथ से कपड़े सिलूँगी।

अलविदा जुमा के मुबारक दिन पर अब्बा सफेद के तीन और फूलदार छींट के दो आधे-आधे थान जाने कहाँ से खरीद कर लाते। सफेद थान में से अब्बा और तीनों लड़कों के और छींट के थान से चारों लड़कियों और अम्मा के जोड़े कटते। हम सबको सुलाने के बाद अम्मा सेहरी तक ताहिरा आपा से माँगकर लाई मशीन पर सिलतीं। ताहिरा आपा हर साल इस शर्त पर मशीन देतीं कि उनका और उनके मियाँ का जोड़ा भी अम्मा सी के देंगी।

हम बहन-भाई जब थोड़ा और सयाने हुए तो अजीब-सा लगने लगा कि मोहल्ले के सारे बच्चे-बच्चियाँ तो नए-नए रंगों के अलग-अलग चमकदार से कपड़े पहनते हैं मगर हमारे घर में सब एक ही तरह के।

मगर अम्मा के इस जवाब से हम मुतमईन (सन्तुष्ट) हो जाते कि एक-से कपड़े पहनने से कुनबे में मुहब्बत कायम रहती है। और फिर ऐसे चटक-मटक कपड़े का आखिर क्या फायदा जिन्हें ईद के बाद तुम इस्तेमाल ही न कर सको।

ईद-उल-फितर पर अब्बा हम सब भाई-बहनों को एक-एक मकईवाला एक बड़ा सिक्का देते थे। इसके इन्तज़ार और खर्च करने का प्लान बनाने में चाँदरात (ईद से पहली रात) आँखों में ही कट जाती। सुबह-सुबह नमाज़ के बाद हमारी खरीदारी शुरू हो जाती। हम सबसे पहले फूलचन्द के ठेले से एक-एक पन्नीवाला चश्मा लेते। इसे पहनकर ज़मीन पर गड्ढा-गड्ढा दिखता। फिर सब लाल ज़बान चूरन और इमली खरीदते। वहीं बगल में सजे मिट्टी के खिलौनों को बस छूकर ही खुशी ज़ाहिर कर लेते। एक बाँसुरी लेता, दूसरा गुब्बारा, तीसरा लट्टू। फिर सब आपस में छीना-झपटी करते। और आखिर में बस उतने ही पैसे बचते कि दो-तीन बर्फ की रंगीन पेप्सी मिल सकें। यहाँ तक कि उन्हीं दो-तीन में से हम सातों बहन-भाई अपना गला तर कर लेते। यह ध्यान रखते हुए कि कोई देर तक न चूसता रह जाए। पैसे खत्म होने के बाद हम दूसरे बच्चों को दीवार पर लगे गुब्बारों को छर्रेवाली बन्दूक से फोड़ते हुए बड़ी हसरत से देखते। बन्दर और भालू का तमाशा भी अकसर मुफ्त हाथ आ जाता। बड़ेवाले गोल से झूले में बैठने से हम सब डरते थे और उसका टिकट भी बहुत महँगा था।

बकरा ईद को सबके यहाँ कुरबानी होती। सिवाए हमारे। अम्मा कहतीं कि जो लोग किसी वजह से कुर्बानी नहीं कर सकते उनके बकरे अल्लाह मियाँ ऊपर जमा कर रखते हैं। जब हम ऊपर जाएँगे तो एक साथ सारे बकरे कुरबान करेंगे, इंशा अल्लाह!

एक दफा गुड़िया ने पूछा लिया कि अम्मा! क्या हम जल्दी ऊपर नहीं जा सकते..?

हर सवाल पर मुतमईन कर देनेवाली अम्माँ चुप-सी हो गईं। और हमें सहन (आँगन) में छोड़कर इकलौते कमरे में चली गईं। हम बच्चों ने पहली बार कमरे से सिसकियों की आवाज़ें आती सुनीं। मगर झाँकने की हिम्मत न हुई। समझ में न आया कि आखिर गुड़िया के सवाल में रोने की क्या बात थी!

कोई छह-सात महीने बाद एक दिन अम्मा बावर्चीखाने (रसोई) में काम करते-करते गिर पड़ीं। अब्बा काम पर थे और हम सब स्कूल में। घर आकर पता चला कि ताहिरा आपा अम्मा की चीख सुनकर दौड़ी-दौड़ी आई थीं और गली के नुक्कड़वाले डॉक्टर शमशाद को बुला लाई थीं।

डॉक्टर ने कहा कि अम्मा का दिल कोई हरकत नहीं कर रहा है।

जनाज़े के बाद एक रोज़ गुड़िया ने मेरा हाथ ज़ोर से पकड़ लिया और ये कहते हुए फूट पड़ी कि खुद तो ऊपर जाकर अगली ईद पर अकेले-अकेले बकरे काटेंगी और हमें यहीं छोड़ गईं।

ओह अम्मा!

(संदीप नाइक की पोस्ट से साभार)

चित्र : तापोशी घोषाल

प्यारे भाई रामसहाय

स्वयं प्रकाश

हमारे स्कूल में एक सर थे। उनका नाम था चन्द्रशेखर व्यास।

स्कूल में जितने सांस्कृतिक कार्यक्रम होते, उन्हीं की देखरेख में होते थे। किसी भी बच्चे में यदि कोई प्रतिभा दिखाई देती तो व्यास सर उसे प्रोत्साहित करने, आगे बढ़ाने और मौके दिलवाने के लिए दौड़-भाग करने लगते थे।

एक दिन व्यास सर ने हमें बुलाकर कहा, "आकाशवाणी से हर हफ्ते एक बच्चों का कार्यक्रम आता है। इस बार उन्होंने हमें अपने स्कूल की टीम लाने को कहा है। तो अपन को चलना है। अपने दोस्तों को भी बता दो।"

ठीक समय पर मुन्नू, सप्पू, जक्कू, मज्जू, बालकिशन और राधेश्याम आकाशवाणी पहुँच गए। वहाँ उन्होंने देखा कि उनकी क्लास का एक लड़का सरवन भी खड़ा हुआ है। पूछा कि तू यहाँ कैसे? तो बोला कि व्यास सर ने आने को कहा था।

एक ठण्डे कमरे में रेकॉर्डिंग शुरू हुई। हमारे अलावा और भी बहुत सारे बच्चे थे। व्यास सर ने हमसे एक समूह गीत तैयार करवाया था। हमने गाया। हमारे साथ सरवन ने भी। उसकी आवाज़ बेहद मीठी थी। हम चौंक गए। हमने पहले कभी उसे गाते नहीं सुना था। व्यास सर ने पता नहीं कब सुन ली उसकी आवाज़?

कार्यक्रम के बाद जब हम लोग बाहर के कमरे में बैठे थे, व्यास सर आकाशवाणी के केन्द्र निर्देशक को लेकर आए और सरवन को उठाकर फिर ठण्डे कमरे में ले गए। उसके बाहर "स्टूडियो" लिखा था और लाल बत्ती जल रही थी। कुछ देर बार सरवन के गाने की आवाज़ सुनाई दी। वह कबीर का कोई भजन गा रहा था। हम सब भागे देखने कि सरवन कहाँ गा रहा है? कहाँ से उसकी आवाज़ आ रही है? लेकिन कुछ पता नहीं चला।

सरवन का पूरा नाम श्रवण कुमार कोली था। उसका रंग बेहद काला था। उसके दुबले-पतले-लम्बोतरे चेहरे पर सफेद-सफेद आँखें मछलियों जैसी लगती थीं। हँसता था तो लगता था जैसे ट्यूबलाइट जल गई हो। शर्मीला था और क्लास में पीछे ही पीछे बैठता था।

अगले दिन उसने बताया कि आकाशवाणीवालों ने उसे बुधवार को बुलाया है। ढोलक-तबला के साथ गवाकर देखेंगे।

गुरुवार को हमने पूछा कि क्या हुआ तो उसने बताया कि उसके दो भजन रेकॉर्ड कर लिए गए हैं। कृषि दर्शन कार्यक्रम में बजेंगे, और कि उसे इसके लिए पच्चीस रुपए मिले हैं।

पच्चीस सुनते ही हमारी आँखें फटी की फटी रह गईं। पच्चीस रुपए बहुत होते थे उस ज़माने में। सरवन बहुत खुश था। उसने कहा कि वह बीच की छुट्टी में सारी क्लास को अमरूद खिलाएगा। सबको बता देना। हमने सबको बता भी दिया, लेकिन उसके अमरूद खाने सिर्फ हम लोग ही पहुँचे। वह इन्तज़ार ही करता रह गया।

हम लोग रेडियो पर तो सरवन का गाना नहीं सुन पाए क्योंकि हममें से किसी के घर में रेडियो नहीं था, लेकिन हमने तय किया कि किसी दिन सरवन के घर चलकर उसी से जी भरकर गाने सुनेंगे।

फिर एक दिन हम लोग सरवन के घर गए। गोबर से लिपा फर्श और घास-फूस की छत। सरवन ने खूब गाने सुनाए लेकिन हमने पाया कि सरवन सिनेमा के गाने ठीक से नहीं गा पाता। वह सिर्फ भजन ही अच्छे गाता है। सिनेमा के गाने वह अपनी ही लय-ताल में गाता है। इस तरह उन्हें एक खुद का रंग दे देता है। जैसा है हूबहू वैसा उससे नहीं गाया जाता। वह खुद ढोलक बजाकर गा रहा था। उसकी आवाज़ इतनी अच्छी थी कि तार सप्तक में भी फटती नहीं थी उलटे और सुरीली हो जाती थी।

कुछ दिन बाद उसने बताया कि उसने जस्सू पटेल के ऑर्केस्ट्रा में गाना शुरू कर दिया है। यहाँ से उसे अच्छे पैसे मिल जाते हैं। शायद उसे पैसों की बहुत ज़रूरत होगी। लेकिन उसके घर को देखकर ऐसा लगता तो नहीं था। उसके पिताजी और माँ दोनों नगरपालिका में काम करते थे।

धीरे-धीरे सरवन का ध्यान पढ़ाई से हटता गया और पैसे कमाने पर ही रहने लगा। वह हमेश पैसों की ही बात करता। उसका स्कूल आना भी कम हो गया। कभी आता, कभी नहीं आता। फिर स्कूल के दिन भी खत्म हो गए, लेकिन हम लोगों का साथ नहीं छूटा।

एक दिन गणेशोत्सव के दौरान हमारे पास की गली में जस्सू पटेल एण्ड पार्टी का ऑर्केस्ट्रा था। हम सब देखने गए। हमने देखा कि उसमें सरवन भी है लेकिन वह गा नहीं रहा था। वह ढोलक बजा रहा था और लोग उसकी ढोलक पर ही मुग्ध थे। प्रोग्राम के बाद हमने उससे पूछा कि तू ढोलक ही बजाता है, गाता नहीं है?

बोला, "यार ये मुझसे गवाते ही नहीं। मैं तो गाना चाहता हूँ। पर साली किस्मत ही खराब है। खैर,मत गवाओ। मुझे क्या। पैसे तो अच्छे मिल जाते हैं!"

एक और कार्यक्रम में मैंने सरवन को देखा। कार्यक्रम के बाद जब मैं उससे मिलने मंच के पीछे पहुँचा तो उसके मुँह से शराब की बदबू आ रही थी। मैंने पूछा, "सरवन! तूने शराब पी है?" वह टेढ़ा-सा मुस्कराकर बोला, "कलाकार के लिए ज़रूरी होता है। मैंने पूछा, "ऐसा तुझसे किसने कहा?"

सरवन ने कोई जवाब नहीं दिया।

कोई साल भर बाद मैं राजवाड़े पर चल रहे जस्सू पटेल एण्ड पार्टी का प्रोग्राम देखने गया - इस लालच में कि शायद सरवन से भेंट हो जाएगी। लेकिन सरवन उस पार्टी में कहीं दिखाई नहीं दिया।

कार्यक्रम के बाद देर रात जब मैं घर लौट रहा था, मैंने देखा कि मंच के पीछे एक आदमी नाली में लुढ़का पड़ा है। उसके कपड़े उलटी में सने हुए हैं और उसमें से भयंकर बदबू आ रही है। क्या वह आदमी सरवन था? हाँ, शायद वह सरवन ही था। मुझे रुककर उसे उठाना चाहिए था, और ताँगे में डालकर घर ले आना चाहिए था। लेकिन मैंने ऐसा कुछ नहीं किया। मैं सिर्फ नाक पर रूमाल रखकर तेज़-तेज़ क़दमों से आगे निकल आया और घर आकर आराम से सो गया।

(शेष भाग पेज 33 पर)

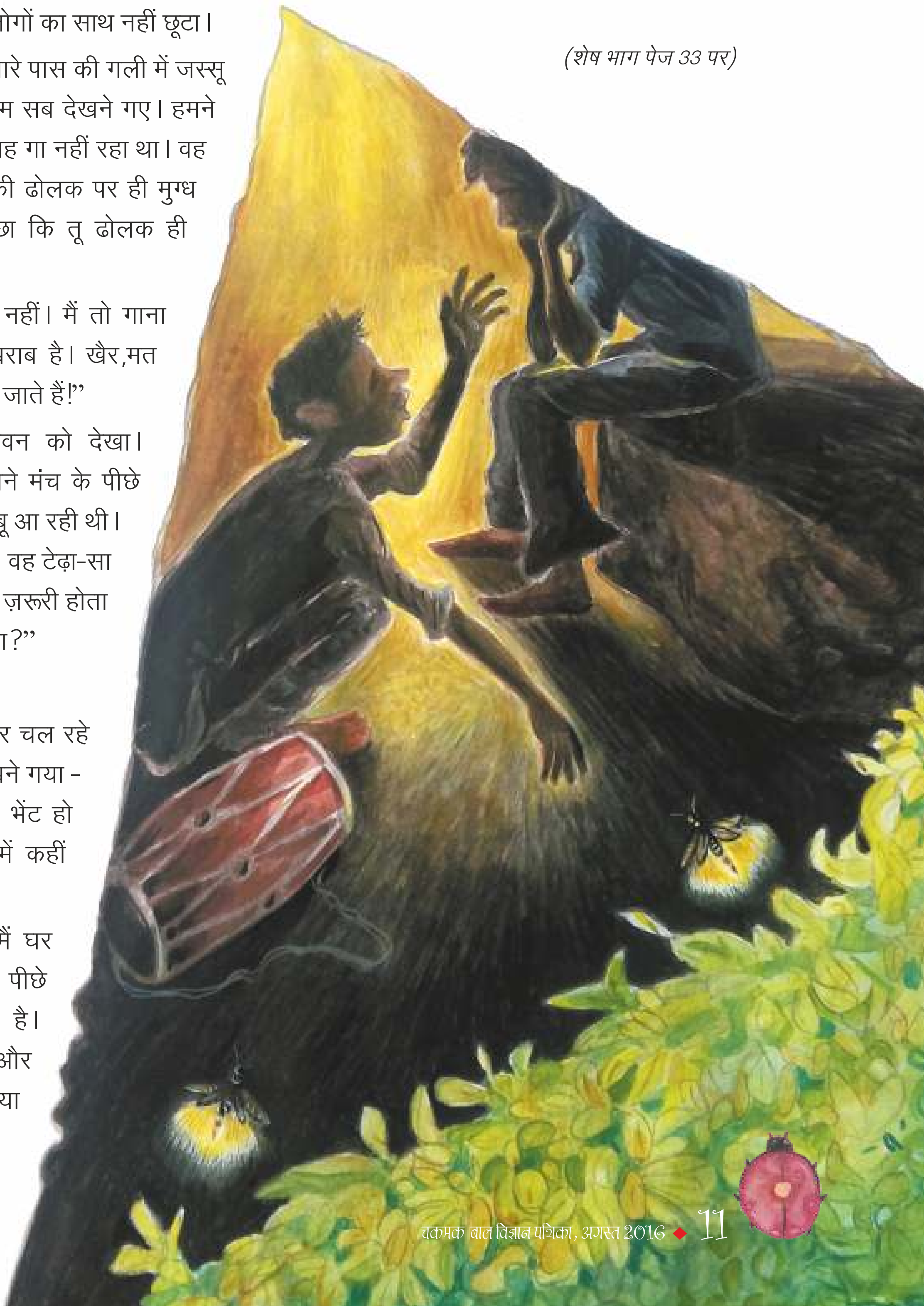

चित्र : प्रशान्त सोनी

ये एक 11-12 साल की बच्ची वान्या की अपने घर लिखी चिट्ठियाँ हैं। हॉस्टल के पहले साल में लिखी। वान्या को इस एक साल में एक अलग माहौल में खुद को ढालने, अलग-अलग जगहों से आए अलग-अलग मिजाज़ के बच्चों के साथ तालमेल बिठाने में मशक्कत करनी पड़ी। गाँव के स्कूल में हिन्दी माध्यम में पढ़ने के बाद उसे इस जाने-माने स्कूल के माहौल में भी खुद को जबरन ढालना पड़ा। जब कोशिशें कामयाब होतीं तो चिट्ठियाँ खुशनुमां होतीं और जब मन कमज़ोर पड़ रहा होता तो चिट्ठी उदासी से भर जातीं। खुश हों या उदास दूर घर में दो लोगों को इन चिट्ठियों का इन्तज़ार रहता।

वान्या की चिट्ठियाँ...

वान्या

पापा,

मैं यहाँ मज़े में हूँ। आज तो कुछ ज़्यादा ही मज़े आए। आज हमारा पहला पीरियड अँग्रेज़ी कहानी सुनाने का था। दूसरा डब्ल पीरियड आर्ट और क्राफ्ट का था। उसके बाद ज्यूस पीने की छुट्टी हुई। उसके बाद हिन्दी का पीरियड था। वो तो बहुत ही मज़ेदार रहा। सब कुछ इतना आसान था ना इसलिए! सब को बस एक-एक पैराग्राफ पढ़ना था। इसी में क्लास पूरी हो गई। मैंने अपना पढ़ना फटाफट कर लिया था। तो अक्का ने कहा कि मैं उन बच्चों के पढ़ने को देखूँ जिनके घर में हिन्दी नहीं बोली जाती है। आद्या के अलावा यहाँ मेरे और भी कई दोस्त बन गए हैं।...

यहाँ स्पीडपोस्ट के लिए डाक हफ्ते में एक ही दिन सोमवार को इकट्ठा होती है। इसलिए आपको मेरी चिट्ठी हफ्ते में एक ही दिन मिला करेगी।...

पापा, कभी-कभी लगता है कि... कि... क्या बोलूँ?? ऐसा करती हूँ मैंने एक दिन जो अपनी डायरी में लिखा था उसी को यहाँ लिख देती हूँ। मेरे ख्याल से वही मेरी बात कह देगी। (पर पापा यह केवल एक दिन की लिखी डायरी है। वो बहुत ही बुरा दिन था। मैं यहाँ उस दिन के लिखे हुए को बस दोहरा रही हूँ। पापा, मुझे ऐसा अकसर लगता है पर रोज़-रोज़ नहीं लगता।) -

मुझे यहाँ बिलकुल अच्छा नहीं लगता। सही में अच्छा नहीं लगता। हमेशा रोने-रोने को मन करता रहता है। कितना अच्छा होता कि मैं घर जा पाती और फिर कभी वापस नहीं आती। मुझे गणित के बहुत सारे सवाल करने हैं। मुझे बहुत डर लग रहा है। मुझे पता है कि मैं उन्हें नहीं कर सकती। बस नहीं कर सकती।

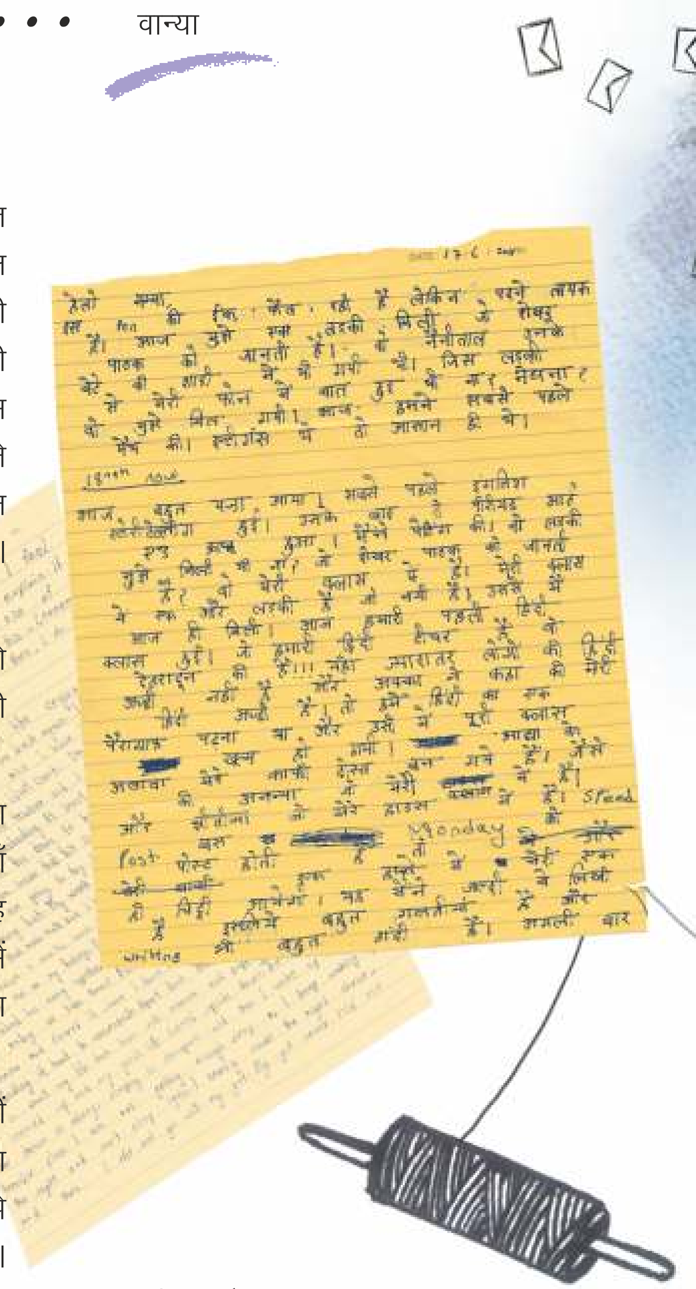

चित्रः सौम्या शुक्ला

टीचर से यह बात कहने में झिझक होती है। डर लगता है। शर्म आती है। मैं यह बात किसी से नहीं कह सकती। घर में जो मैं पढ़ती थी उसे मैं बहुत मिस करती हूँ। वहाँ मम्मी होती थीं जिनसे मैं कुछ भी पूछ सकती थी। किसी को लग सकता है कि यह होम सिकनेस है (घर की याद आना)। पर यह उससे बहुत ज़्यादा है, अलग है। मेरा मन कहता है कि यह फैसला गलत हो गया। मुझे घर जाना है। बस घर जाना है। मैं बस किसी तरह एक टर्म यहाँ काटने की कोशिश करूँगी। पर अगले टर्म में मैं यहाँ बिलकुल नहीं आनेवाली। मुझे पढ़ाई की बहुत चिन्ता हो रही है। इतना सारा गणित मैं नहीं कर सकती, पर मुझे करना ही पड़ेगा। नहीं जानती कि ये चार महीने मैं यहाँ कैसे रहूँगी? यहाँ कोई मुझे समझता नहीं है। न मेरी फीलिंग्स को। कभी रोती हूँ तो लोग चिढ़ जाते हैं। किसी को कोई मतलब नहीं। मैं जानती हूँ कि इस स्कूल में करने-सीखने की गुँजाइश बहुत है। पर मेरे लिए उनका क्या मोल जब मैं उन्हें एन्जॉय ही नहीं कर पाती! जब मैं उन्हें बरत ही नहीं पाती! घर में होती तो हर दिक्कत के लिए माँ के पास जा सकती थी। उनसे बाँट लिया। पर यहाँ मैं किसी भी चीज़ में ध्यान नहीं लगा पाती। मुझे सपने आते हैं। घर के। जहाँ माँ है, पापा हैं, अरू है। फिर मैं उछलती हूँ और झटके-से मेरी वो खुशनुमा ज़िन्दगी मुँह के बल आ गिरती है। मेरा सपना हमेशा मुझे सोनापानी में सोता हुआ छोड़ जाता है। पर आँख खुलती है इस सड़ी-सी जगह में। मेरी नींद पूरी नहीं होती। रात में बार-बार नींद टूटती है। कोशिश करती हूँ फिर भी नहीं आती। यहाँ आने की बात तो मैंने ही सोची थी, पर दिल की बात नहीं मानी। मेरे दिल ने कभी नहीं कहा था कि मैं यहाँ आ आऊँ। पर फिर दिमाग भी तो है। वो हावी हो गया। पर अब मुझे घर जाना है, बस घर जाना है। जल्दी से जल्दी।

पर पापा मैंने पहले भी कहा था न, मुझे रोज़-रोज़ ऐसा बुरा नहीं लगता। पर एक से ज़्यादा बार लगा है। आप चिन्ता मत करना पापा। प्लीज़। चिन्ता मत करना पर जितनी जल्दी हो सके लिखना ज़रूर।

इस खत के पहुँचने से पहले मैं आपसे फोन पर बात करूँगी। और हाँ, यहाँ एयर-फोर्स साइज़ लिफाफे (शायद ए4 साइज़) नहीं हैं। वो भिजवा देना। और तकिए के पुराने पर साबुत गिलाफ भी चाहिए मुझे।

वान्या

द किंग एंड द लिटिल मैन

चित्र तथा कथा - के जी सुब्रह्मण्यम

अनुवादः शशि सबलोक

के जी सुब्रह्मण्यम हमारे देश के जाने-माने चित्रकार हैं। बीते माह 92 वर्ष की उमर में उनकी मृत्यु हुई। उन्हें कला में विशेष योगदान के लिए पदमविभूषण से भी सम्मानित किया गया। उन्होंने बच्चों के लिए कहानियाँ भी लिखीं, चित्र बनाए, पुस्तकें बनाईं। इनमें से कुछ हैं – हाउ हनु बिकम हनुमान, कैट्स नाइट एंड डे, ए समर स्टोरी, अवर फ्रैंड ऑगरस, हाउ पॉपी ग्रू हैप्पी, रॉबी, डैथ इन ईडेन...। इन सभी किताबों को प्रकाशित किया है – सीगल बुक्स ने। तुम इन किताबों को मँगाने के लिए सीगल बुक्स, 26, सर्कस एवेन्यू, कोलकाता -700026 से सम्पर्क कर सकते हो। इन्हीं बेहद दिलचस्प किताबों में से एक है – द किंग एंड द लिटिल मैन। यहाँ उसकी कहानी तथा कुछेक चित्र दे रहे हैं ताकि तुम्हें इन किताबों की एक झलक मिल सके।

एक बहुत पुराना देश था। वहाँ कोहरे से ढँके पहाड़ थे,
नदियाँ थीं, घाटियाँ थीं, जंगल थे और बगीचे थे,
पशु-पक्षी थे और इंसान थे।

और उस देश का एक राजा था।
पर राजा कौन होता है?
राजा एक आदमी होता है।
थोड़ा बड़ा आदमी होता है बस।

उसका एक सिंहासन था।
पर सिंहासन क्या होता है?
सिहासन एक कुर्सी होती है।
थोड़ी बड़ी कुर्सी होती है बस।

राजा अपने सिंहासन को ऊँची जगह पर रखता है।
जब वो लोगों के सामने आता है तो इस पर बैठ जाता है।
इससे वो औरों से ज़्यादा बड़ा दिखने लगता है।

वो रेशमी कपड़े, जवाहरात, मुकुट और ताज पहनता
वो तलवार और भाले, तीर और कमान लिए चलता
इससे उसका कद और ऊँचा जाता

हालाँकि वो बेज़ा माल से भरे ऊँट जैसा ज़्यादा लगता

पर लोग उससे बहुत प्रभावित थे।
उस तरह का वो अकेला ही बन्दा था।
सरकस और नाटकों में भी उस सरीखा कोई न था।

वो एक ज़िन्दा चीज़ थी।

राजा को इससे बड़ी तसल्ली मिलती।
वो इसलिए कि राजा चाहता कि दूसरे उसे याद में बनाए
रखें। हमेशा।

उसी देश में रहता था एक और आदमी।
एक छोटा आदमी वैसे ही जैसे होते थे दूसरे आदमी

पर उसके पास थी आँखों की चमक, एक तेज़ दिमाग और
मीठी ज़ुबान

जब लोग अपने बारे में ही बतियाते थे
हमेशा
उसकी बातों में होता था पूरा जहान

उसकी बातों में थी –
पहाड़ों की बर्फ
सुबह की गुनगुनी धूप की तितलियाँ
आधी रात के तारों की चमक

और वो गाता था उन्हीं के गीत

लोगों के लिए ये ताज़ी हवा के झौंके थे
वे खुद से कुछ दूर तक देखने लगे थे अब
खुद को इस बड़ी दुनिया का एक हिस्सा
महसूस करने लगे थे अब

एक रविवार की सुबह
जैसा वो अकसर करता था
राजा ने महल से बाहर खुले में
अपना दरबार सजाया
और पूरा देश उसे देखने आया

इसमें शामिल था वो छोटा आदमी भी

एक सुन्दर दिन था वो
आसमान गहरा नीला था ज़्यों
एक सफेद बादल तैर रहा था वहीं
गहरे नीले के बीच कहीं
एक सपनीली नाव की तरहा

हुआ जैसे ही वक्त
राजा के बज उठे नगाड़े
और बज उठा बिगुल

पर तभी हलकी-सी हवा
घास के सहारे ऊपर उठी
लोगों की पीठ पर बही
और ऊपर आसमान की ओर बढ़ चली

और सरक गया वो सफेद बादल भी।

देखो, वो छोटा आदमी बोला।
और सभी ने सिर उठाया

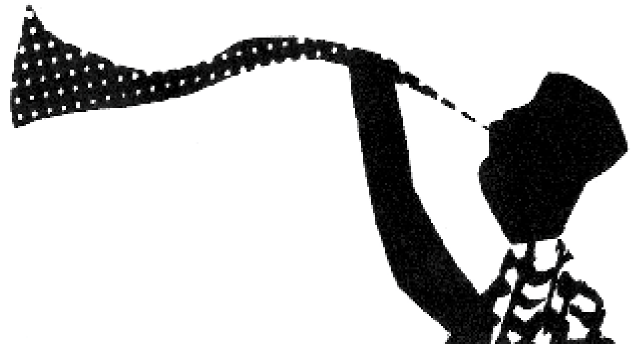

और मुँह बाए देखते रह गए

बादल आगे बढ़ा
और बर्फ से ढँके पहाड़
नुमाया हो गए।

आह, सभी के मुँह से निकला
आँखें अब भी चस्पां थीं
उन बर्फीली चोटियों पर

किसी ने राजा को नहीं देखा

निराश राजा
तैश खाकर चला गया

दरबारियों ने उसे बहलाया और मनाया
हर दिन एक समान नहीं होते मेरे आका

पर वो ज़रा न माना
उनका मशविरा कोई मशविरा न था

उसे चाहिए एक रानी
समन्दर पार की रानी
जिससे ली जा सके ऐसे मुश्किल वक्त में कोई राय चुपचाप

तो आई एक रानी
पर रानी कौन होती है?
रानी एक औरत है।
पर ज़्यादा सजी-धजी हीरे जवाहरात से लदी औरत।

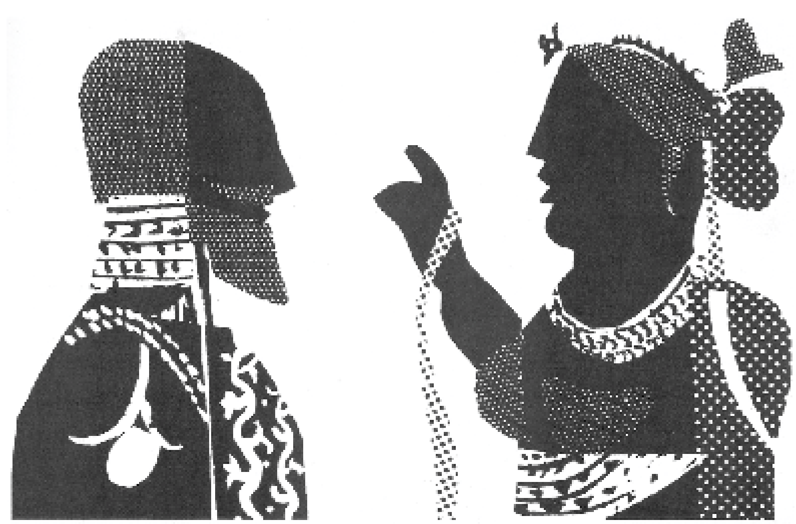

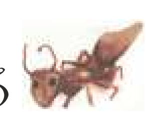

पर वो थी चतुर। राजा ने साझा किया उससे अपना डर।
न फिक्र करो मेरे प्रियतम है मेरे पास इसका जवाब
क्यों न हो पढ़ा है मैंने हार्वर्ड बिज़नेस स्कूल में अपार

और उसे मालूम था सब कुछ

काफी नहीं है इन दिनों बस दरबार ही सजाना
बिगुल की ये आवाज़ नहीं भेद सकती है दूरियाँ सारी
सोने-चाँदी की चमक 20 गज भी नहीं कर सकती है पार।

तो हे मेरे प्यारे राजा अगर दिखाई देना चाहते हो तुम हर सू
तो कागज़ों में दिखो, रेडियो में बजो
पोस्टरों, इश्तिहारों से झरो

इतने बड़े इश्तिहार कि ढँक दें सारे पहाड़
रेडियो की आवाज़ इतनी तेज़ की चिड़ियों की चहचहाहटों को ढाँप दे बेतरह

और चाहिए होगी इसके लिए बिजली बेपनाह
ऐसी तेज़ रोशनी कि जो आसामान को भी कर दे शर्म से पानी-पानी

तो उनके पास हो गया यह सब भरपूर
और लोग न देख सके इसके पार, न पास न दूर
जहाँ देखते दिखाई देते राजा याकि रानी हर सू

अब सिंहासन पर न बैठा रहता था राजा
घूमता-फिरता नाज़ नखरे दिखाता
तस्वीरों में कभी घोड़े पर चढ़ा, कभी हँसता-गाता नज़र आता
कभी सूट-बूट में तो कभी एक-आध कपड़ों में झूमता

और इस सब के बीच भुला दिया गया वो छोटा-सा आदमी

रानी ने झट राजा के सारे गीतों को फैला दिया पूरी दुनिया में
लोग अब बस इन्हीं को गुनगुनाते, इन्हीं की धुन पर थिरकते

इस शोर में किसी को किसी की बात या कुछ औऱ भी न पड़ता सुनाई
बस वो देखते, और झूलते-थिरकते

पर इस सब के बीच भी वो महसूस करते कुछ कमी
हाँ पर वो है क्या न जानते थे वो सभी

तो एक दिन
बिजली हुई गुल

रेडियो रहा चुपचाप
रोशनी का न था कहीं पता

सिनेमाघर रहे बन्द

पर उस रात तारे
बहुत तेज़ चमके
ऐसे जैसे पहले कभी नहीं थे दमके

पहाड़ों की बर्फीली नोंकों पर
चमक रहे हीरे
रानी के जवाहरातों को कर रहे थे फीका।

दूर सुनाई दी तभी एक चिड़ी की दुखभरी आवाज़

पक्षियों के पंखों की फड़फड़ाहट
सुनी सबने
रात के अँधकार को चीरती

और उस अँधेरे शहर से
सबने सुनी एक छोटे आदमी की
गुनगुनाने की आवाज़
जिसे वो भुला तो नहीं बैठे थे अब तक

और तब उन्होंने जाना....

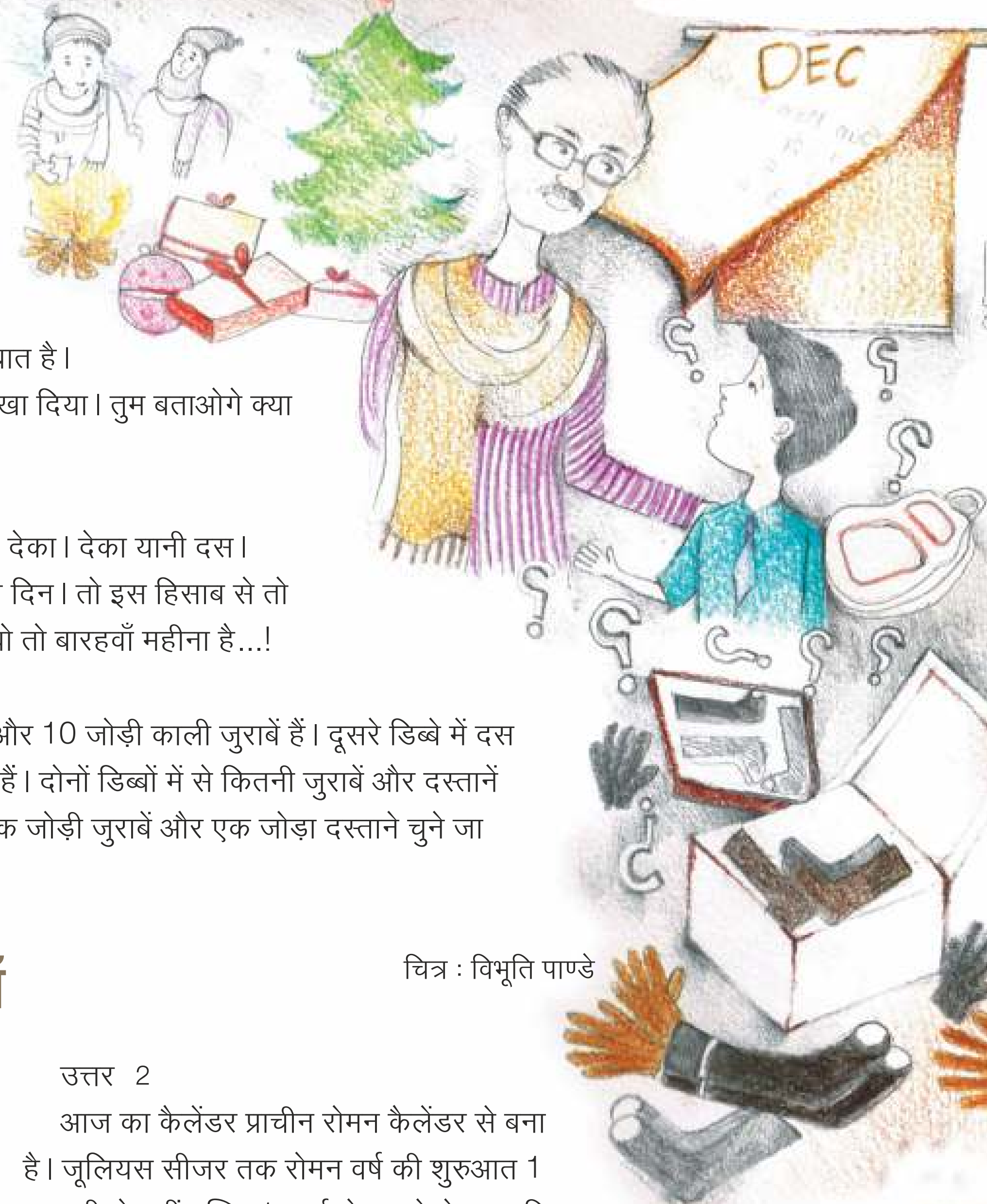

1. सन 1932 की बात है। उस समय मेरी उम्र ठीक उतनी थी जितनी मेरे जन्म के साल की दो आखरी अंकों की संख्या है। जब मैंने यह बात अपने दादाजी को बताई तो उन्होंने कहा कि उनकी उम्र के साथ भी यही बात है। ऐसा कैसे? पर दादाजी ने यह सिद्ध करके दिखा दिया। तुम बताओगे क्या उम्र थी उस समय हम दोनों की?

2. दिसम्बर शब्द का मूल यूनानी शब्द है – देका। देका यानी दस। देकालीटर यानी दस लीटर। देकाद यानी दस दिन। तो इस हिसाब से तो दिसम्बर को दसवाँ महीना होना चाहिए। पर वो तो बारहवाँ महीना है...!

3. एक डिब्बे में 10 जोड़ी भूरी जुराबें और 10 जोड़ी काली जुराबें हैं। दूसरे डिब्बे में दस जोड़े भूरे दस्ताने और 10 जोड़े काले दस्ताने हैं। दोनों डिब्बों में से कितनी जुराबें और दस्तानें निकालने काफी होंगे कि किसी एक रंग की एक जोड़ी जुराबें और एक जोड़ा दस्ताने चुने जा सकते हैं?

पहेलियाँ

चित्र : विभूति पाण्डे

उत्तर-1

इस दादा-पोते की उम्रवाली पहेली में बहुत सम्भव है कि पोता 20वीं सदी में पैदा हुआ होगा। इसलिए उसके जन्म के साल के पहले दो अंक 19 होंगे। बाकी बचे अंकों की संख्या दुगुना करने पर 32 आना चाहिए। तो वो संख्या 16 है। इसलिए पोते के जन्म का साल होगा 1916 और सन 1932 में उसकी उम्र 16 साल थी।

इस हिसाब से दादा का जन्म 19वीं सदी में हुआ था। इसलिए उनके जन्म के साल के पहले दो अंक होंगे 18। बाकी बचे अंकों की संख्या को दुगुना करने पर 132 आना चाहिए। इस संख्या का आधा होगा 66। यानी दादा का जन्म 1866 में हुआ था और 1932 में वे 66 साल के थे।

उत्तर 2

आज का कैलेंडर प्राचीन रोमन कैलेंडर से बना है। जूलियस सीजर तक रोमन वर्ष की शुरुआत 1 जनवरी से नहीं बल्कि 1 मार्च से मानते थे। इस हिसाब से दिसम्बर दसवाँ महीना ही था। साल की शुरुआत 1 जनवरी से मानने का निर्णय लेने के बाद भी महीनों के नाम नहीं बदले गए। ऐसी गफलत केवल दिसम्बर के साथ ही नहीं है। सितम्बर, अक्टूबर और नवम्बर के साथ भी है। क्योंकि इनके नामों का अर्थ है – सातवाँ, आठवाँ और नवां।

उत्तर 3

तीन जुराबें निकालना काफी होगा क्योंकि उनमें से दो हमेशा एक रंग की होंगी। दस्तानों की संख्या बताना मुश्किल है क्योंकि वे सिर्फ रंगों में ही अलग नहीं हैं। आधे दस्ताने बाएँ हाथ के हैं और आधे दाएँ हाथ के। इसलिए 21 दस्ताने निकाले पड़ेंगे। इससे कम जैसे 20 निकालने पर हो सकता है कि सभी एक ही हाथ के लिए हों। (जैसे सिर्फ बाएँ हाथ के लिए 10 भूरे दस्ताने और 10 काले दस्ताने।)

पुड़ियों की गाड़ी

कृष्ण कुमार

किस्त - 3

कतार का अगला सिरा संगीत रूम में दाखिल हो चुका था। संगीत रूम में घुसकर कोई बात करना असम्भव होता था। फूलों वाली एलबम के लिए राधा की स्वीकृति इतनी आसानी से पाकर पुष्पा काफी चकित लेकिन पूरी तरह सन्तुष्ट थी। अब तो बस संगीत रूम की विशाल दरी पर बैठना और गाना शेष था –

"कैसी रे भलाई रे कन्हाई ....।"

बड़ी बहनजी ने बस को ठीक कराने की ज़िम्मेदारी उसी दोपहर स्कूल के नौजवान चौकीदार सरजू को सौंप दी। सरजू था तो चौकीदार लेकिन उसके दिल और कानों में हर समय मोटर गाड़ियों के इंजन की घरघराहट गूँजती रहती थी। आठवीं पास करके कई साल बेरोज़गार रहने के दौरान उसने बस स्टेण्ड के पासवाले मोटर गैराज पर अपने बड़े भाई से मोटर गाड़ियों की मरम्मत का काम सीख लिया था। स्कूल में चौकीदार की नौकरी मिल जाने के बाद भी वह हमेशा इस फिराक में रहता था कि कोई खराब गाड़ी मिले तो उसे ठीक करे। आज सुबह बड़ी बहनजी के मुँह से पुरानी बस के चलाए जाने की घोषणा सुनकर सरजू ने एक अर्ज़ी लिखी जो इस तरह थी –

सेवा में
प्राचार्या
जानकी देवी शासकीय कन्या उच्चतर माध्यामिक विद्यालय
रीवा म.प्र.

पूज्यनीय बड़ी बहनजी,

सेवा में सविनय निवेदन है कि आपने आज सवेरे प्रार्थना में स्कूल की पुरानी बस को ठीक कराके निवाड़ी भेजने की बात कही है। उसके बाबत आपसे प्रार्थना है कि गाड़ी को ठीक कराने की पूरी ज़िम्मेदारी मुझे देने की कृपा करें। मैंने मोटरगाड़ी सुधारने का पूरा काम सीखा है और मैं इस बस को आपकी पूरी तसल्ली से सुधार सकता हूँ। गाड़ी को लेकर आप कोई चिन्ता न करें। मैं खुद स्कूल की बिटियों के साथ निवाड़ी जाऊँगा और रास्ते में कोई भी परेशानी होने पर उसे दूर करूँगा। मरम्मत का काम आप मुझे ही देना।

आपका सेवक
सरजू चौकीदार

अर्ज़ी लेकर सरजू खुद बड़ी बहनजी के पास गया। अर्ज़ी पढ़कर बड़ी बहनजी धीरे-से मुस्कराईं। फिर गम्भीर होकर बोलीं, "यह तो ठीक है, पर गाड़ी चलाएगा कौन?"

सरजू ने इस प्रश्न का उत्तर पहले से सोच रखा था,

"अपने यहाँ कुसुम बिटिया है न? आप उन्हीं का ड्राइवर बुलवा लें तो ठीक रहेगा। भगवानदास नाम है।"

जिन दिनों की यह कहानी है, उन दिनों ज़िले के कलेक्टर जैसे ऊँचे अधिकारी की बेटी भी सरकारी स्कूल में पढ़ती थी। आज के अँग्रेज़ी मीडियम स्कूलों

का चलन नहीं था। दसवीं क्लास की कुसुम रीवा के कलेक्टर की बेटी थी। उसे स्कूल छोड़ने और ले जाने कलेक्टर का ड्राइवर भगवानदास आता था। बड़ी बहनजी तो इसी वर्ष रीवा आई थीं। भगवानदास तीन साल से रोज़ स्कूल आ रहा था, इसीलिए सरजू की उससे अच्छी पहचान हो गई थी। सरजू का सुझाव सुनकर बड़ी बहनजी के मन में आया कि बस की मरम्मत करने में भी सरजू भगवानदास की मदद ले। सरजू का यह सुझाव उन्होंने मान लिया कि भगवानदास ही बस को चलाकर निवाड़ी ले जाएगा।

सूरज और भगवानदास अगले दिन से मरम्मत में जुट गए। सरजू को बड़ी बहनजी ने स्कूल के काम से पूरी छुट्टी दे दी थी और भगवानदास अपने साहब को उनके आफिस में छोड़कर स्कूल आने लगा था। सबसे पहले उन्होंने बस की सफाई की। सींकवाले दो झाड़ू लेकर उन्होंने बस में जगह-जगह जमी धूल-मिट्टी हटाई। सीटों के नीचे इंजिन के भीतर मोटी-मोटी मकड़ियाँ विशाल जाले बनाकर वर्षों से रह रही थीं। उन्हें विदा करके सरजू इंजिन खोलने में जुट गया और भगवानदास एक्सिल की जाँच के लिए बस के नीचे घुस गया।

दो दिन तक ये दोनों तमाम छोटे-बड़े पुर्जे निकालकर मिट्टी के तेल में धो-धोकर यह हिसाब लगाते रहे कि कौन-सा पुर्जा अभी चल सकता है और किसे बदलना ज़रूरी है। तीसरे दिन सरजू ने उन तमाम पुर्ज़ों की सूची बनाई जिन्हें बदलना ज़रूरी था। यह सूची बड़ी बहनजी को दिखाकर और पैसे ऑफिस से निकलवाकर वह बाज़ार गया। जो-जो पुर्जे उनके पास नहीं थे उन्हें तुरन्त प्राप्त करने का यही एक तरीका था कि बस स्टैण्ड के पासवाले मोटर गैराज में काम करनेवाले बड़े मिस्त्री से कहा जाए। बड़े मिस्त्री को अकसर यह अन्दाज़ रहता था कि गैराज के आसपास खड़ी पुरानी परित्यक्त बसों और छोटी गाड़ियों में से किनसे कोई पुर्जा निकाला जा सकता है।

चार पाँच दिन में बस की सूरत निखरने लगी। बस का सबसे ज़रूरी अंग उसका एक्सिल होता है। वही चारों पहियों को जोड़ता है और इंजिन से ताकत लेकर पहियों को आगे बढ़ाता है। इस बस का एक्सिल वर्षों से रुका पड़ा होने से जंग खा चुका था। उसे ज़िन्दा करने में पूरा एक दिन लग गया। फिर गियरों की बारी आई। गियरों का काम इंजिन की ताकत को किफायती ढंग से इस्तेमाल होने देता है। गियर लोहे के दाँतेदार चकों को कहते हैं। उनके दाँते एक-दूसरे में फँसकर चकों को घुमाते हैं। भगवानदास ने बस की गियर-प्लेट खोली तो देखा कि उसके अन्दर छिपकलियों का एक भरा-पूरा परिवार रह रहा था। बच्चे तो गियर प्लेट खुलते ही भाग खड़े हुए, पर माँ को हटाने में काफी दिक्कत आई। गियरों के दाँते ठीक-ठाक थे। पर कई सालों से खड़े रहने के कारण अपनी जगह जम गए थे। इसलिए हर एक चके को खोलकर साफ करना पड़ा। गियरों के बाद बारी आई क्लच-प्लेट की, जो गियरों को नुकसान पहुँचाने से बचाने का काम करती है। उसके बाद ब्रेक का नम्बर आया। ब्रेक एकदम बर्बाद हो चुके थे इसलिए नए लगाने पड़े।

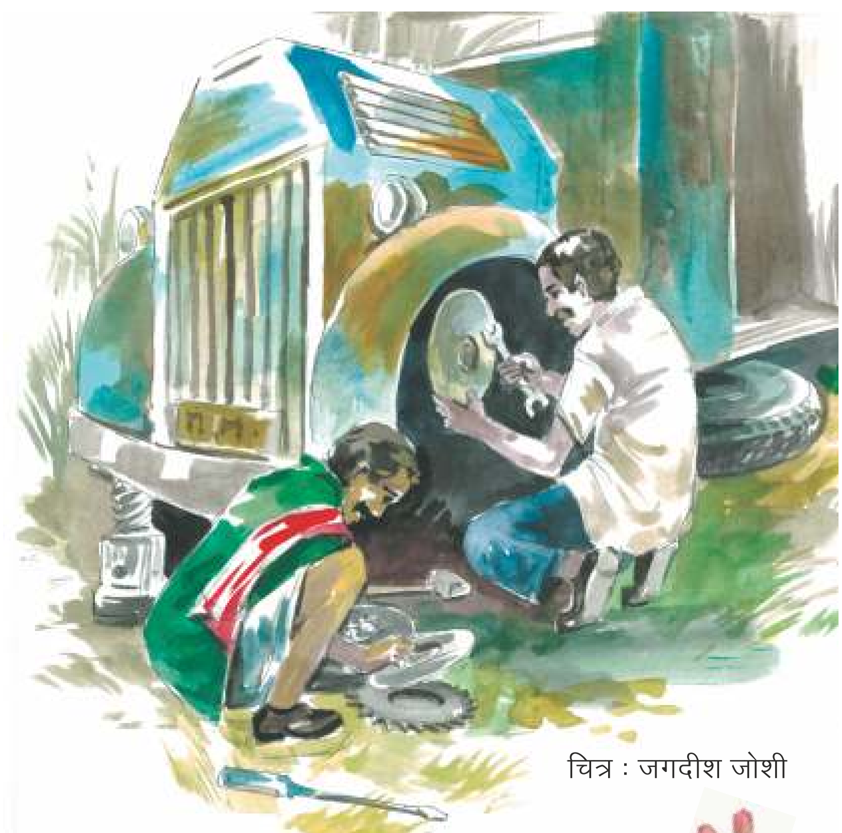

चित्र : जगदीश जोशी

उधर सरजू इंजिन खोलकर पूरा एक हफ्ता उसी पर काम करता रहा। शुरू के दो दिन वह कुछ निराश रहा क्योंकि वह इंजिन का जो भी हिस्सा खोलता, उसी में छेद नज़र आता। रेडियेटर में, जहाँ इंजिन को ठण्डा रखने के लिए पानी की एक छोटी टँकी रहती है, एक चूहा अपने पूरे परिवार के साथ ठाठ से रहता हुआ मिला। ठोंका-पीटी की आवाज़ से वह अपने बच्चों के साथ निकल गया, लेकिन आधी रात को फिर वापस आ पहुँचा। उसे समझ नहीं आ रहा था कि उसे घर से क्यों निकाला जा रहा है। वह तो जब सरजू ने रेडियेटर पूरी तरह बन्द करके सील करवा दिया, तब चूहे ने किसी और घर की तलाश शुरू की।

बस के इन बड़े हिस्सों की मरम्मत में लगभग पूरी महीना निकल गया। अक्टूबर की ग्यारह तारीख को बड़ी बहनजी स्कूल आते समय बस के पास रुकीं। सरजू इस समय बाईं तरफ का पहिया सुधार रहा था। बड़ी बहनजी ने कहा,"सरजू, लड़कियाँ बीस को रवाना होगी। अब कितनी कसर रह गई है?"

गनीमत थी कि बड़ी बहनजी की आवाज़ सुनने से कुछ सेकण्ड पहले ही सरजू ने बीड़ी खत्म करके फेंकी थी। यदि बीड़ी अभी उसके मुँह में होती तो बड़ी बहनजी उसे करारी डाँट दिए बिना न रहती। सरजू को उन्होंने कितनी ही बार समझाया था कि बीड़ी पीना खतरनाक होता है। आज वह रंगे हाथों पकड़े जाने से बच गया था। बड़ी बहनजी की आवाज़ सुनकर वह एकदम खड़ा हो गया और हाथ झाड़कर बोला, "गाड़ी तैयार है, बड़ी बहनजी। बस, टायर-ट्यूब बदलना है।"

"इसमें कितना और खर्चा आएगा? आज ही निकलवा लो। कल दशहरे की छुट्टी है। मुश्किल ही जाएगी।" बड़ी बहनजी ने कहा।

"मैं अभी बाज़ार से पूछकर आता हूँ। दशहरा हो, कुछ हो, बस चलाकर ही छुट्टी लूँगा।" सूरज ने गर्व से कहा।

उस शाम तक छह नए ट्यूब-टायर खरीदे जा चुके थे। दो-दो के जोड़े पीछे के पहियों के लिए और एक-एक आगेवाले पहियों के लिए। अगले दिन सुबह से सूरज और भगवानदास पुराने पहियों को निकालने में जुट गए। पहिए को निकालने के लिए जैक की ज़रूरत होती है। जैक बस के वज़न को सम्भाले रखता है। और इस बीच पहिए पर नए ट्यूब और टायर चढ़ा दिए जाते हैं।

स्कूल के फाटक में सबसे पहले रोज़ सुबह कुसुम मैडम दाखिल होती थीं। उनके आने के थोड़ी देर बाद तिजिया आती थी। घण्टी बजाने की ज़िम्मेदारी तिजिया की ही थी। दुबली-पतली तिजिया पिछले कई महीनों से बीमार चल रही थी, इसलिए कई बार कुसुम मैडम खुद घण्टी बजाती थीं। स्कूल में घुसते समय उन्होंने कई जोड़े चमचमाते हुए टायर देखे तो अपने आप उनके मुँह से निकल गया, "सूरज, लगता है बस की मरम्मत का काम पूरा हो गया है।"

"हाँ मैडम, थोड़ी ही कसर है। सारे टायर चढ़ाकर उनमें हवा भरवाने पेट्रोल पम्प ले जाना है।" सूरज ने टायरों पर हाथ रखते हुए कहा।

"तुम दोनों कैसे ले जाओगे? मैं कुछ लड़कियों भेजती हूँ।"

सरजू और भगवानदास हँसने लगे। उन्होंने क्या, पूरे शहर में किसी ने यह कल्पना नहीं की थी कि स्कूल की लड़कियाँ बस के पहिए लुढ़काकर पेट्रोल पम्प तक ले जाएँगी। यह काम कभी किसी लड़की ने नहीं किया था। इसलिए प्रार्थना के बाद जब कुसुम मैडम ने घोषणा की कि आज दोपहर पहिए लुढ़काने के लिए कुछ लड़कियों की ज़रूरत पड़ेगी, तो कोई उम्मीदवार सामने नहीं आया। अन्त में कुसुम मैडम ने खुद ही यह फैसला किया कि जो लड़कियाँ बास्केटबॉल की टीम में शामिल की गई हैं, वे ही पहिए लुढ़काकर पेट्रोल पम्प तक ले जाएँगीं। ये लड़कियाँ थीं – उषा, किरण, विजया, इन्दु, प्रभा, आशा, चित्रा, मुदृला, सीमा, दमवन्ती, कुसुम और शकुन्तला। जब इन लड़कियों के नाम पुकारे जा रहे थे, उस समय तो वे काफी परेशान महसूस कर रही थीं, लेकिन दोपहर आते-आते स्थिति बदल गई।

सारी सुबह सूरज और भगवानदास ने बस के पीछेवाले पहिए उतारने और उन पर नई टायर-ट्यूब चढ़ाने में लगा दी। बास्केटबाल की पूरी टीम इस काम को पहले तो देखती रही, फिर स्वयं मदद देने में जुट गई। दोपहर होते-होते सबको लगने लगा जैसे नए टायर चढ़े पहियों को लुढ़काकर पेट्रोल पम्प ले जाना ही दुनिया का सबसे रोमांचक काम है। पीछे के चार पहिए जैसे ही तैयार हुए, कुसुम और आभा उन्हें ले जाने को बेताब हो उठी। आज उन्होंने पहली बार जाना कि इतने भारी पहिए लुढ़काकर सड़क पर चलना कितना मज़ेदार, भले ही मुश्किल, काम है। वे सड़क पर निकलीं तो उनके पीछे पूरी टीम हो ली। हवा भरवाकर पहिए वापस लाना कम मुश्किल सिद्ध हुआ। इधर पीछे सरजू और भगवानदास अगले दोनों पहियों को निकालकर उन पर नए टायर चढ़ाने में लगे रहे। पीछेवाले पहिए वापस आने तक आगे वाले पेट्रोल पम्प ले जाए जाने के लिए तैयार थे।

इन्दु और उषा देखना चाहती थीं कि पहिए कैसे फिट किए जाते हैं। उन्होंने ज़िद्द की कि एक पहिया ये खुद फिट करेंगी। सरजू और भगवानदास ने आनाकानी की। यहाँ तक कहा कि वे बड़ी बहनजी से शिकायत करेंगे। इन्दु और उषा इस बात की शिकायत किए बिना जाने के लिए खुशी से तैयार हो गईं क्योंकि उन्हें पक्का भरोसा था कि बड़ी बहनजी उन्हीं का पक्ष लेंगी। दोनों आदमियों के सामने कोई चारा न रहा। वे लगातार टोकते रहे और इन्दु व कुसुम पहिया फिट करने में जुटी रहीं। उनकी देखादेखी बास्केटबॉल टीम की लड़कियाँ भी इसी काम में लग गईं। छुट्टी की घण्टी बजने तक सबके हाथ काले हो चुके थे और स्कूल की पुरानी बस नए टायरों पर खड़ी हो चुकी थी।

अब वह भाग तो सकती थी, पर उसकी सीटें अभी बैठने लायक नहीं थीं और खिड़कियों के काँच टूटे हुए थे। फटी हुई सीटों पर नए कवर चढ़ाने और खिड़कियों में शीशे लगाने में अगले दो दिन खर्च हो गए। इन कामों में मदद करने के लिए कई लड़कियाँ स्वयं सामने आईं। कई और छोटी-छोटी चीज़ें – जैसे ड्राइवर का भोंपू, पीछे देखनेवाला शीशा, बारिश का पानी पोंछनेवाला वाइपर, वगैरह बाज़ार से लाकर लगाई जानी थीं। ये सारे काम निपटाने में दशहरा कब आया, कब निकल गया, किसी को जैसे मालूम ही नहीं चला।

अगले अंक में जारी

भाषा की पीएनजी

रमाकान्त अग्निहोत्री

पिछले अंक में पुरुष (Person), वचन (Number) और लिंग (Gender) की बात कुछ इस तरह हो गई जैसे आप सब कुछ समझते ही होंगे। लेकिन शायद ऐसा न हो। इसलिए पहले इन पर चर्चा कर लें फिर लिंग की कुछ बात आगे। मुझे लगता है हर भाषा में किसी न किसी रूप में इनका होना ज़रूरी है। कई लोग मानते हैं कि जैसे कारों-ट्रकों आदि में CNG होता है वैसे ही भाषा में PNG होता है।

पुरुष की बात लें। लगता है कि यदि तीन पुरुष नहीं होंगे तो बातचीत ही नहीं हो पाएगी यानी – मैं, तुम और वह। थोड़ा ध्यान से सोचें तो इन्हीं में दुनिया समा जाती है। आप ही सोचिए कौन बचा! बात करनेवाला "मैं", सुननेवाले "तुम" और जिसके बारे में बात हो रही है "वह"। अलग-अलग परिस्थितियों में इनके अलग-अलग रूप हो सकते हैं जैसे – "मैं, मुझ, मुझे, मेरा, हम, हमारा", "तू, तुम, आप, तुझ, तेरा, तुम्हारा" और "वह, इन, वे, उनका, इनका" आदि। अँग्रेज़ी में आई 'I', वी 'we' , यू 'you', ही 'he', शी 'she', इट 'it', दे 'they' आदि से काम चलता है। तुमने देखा होगा कि इन थोड़े से शब्दों में भी वचन और लिंग की झलक नज़र आ रही है। यह भी सही है कि कुछ भाषाओं में पुरुष-सर्वनाम की व्यवस्था ऐसी नहीं होती। उदाहरण के लिए जापानी भाषा में "उत्तम (मैं), मध्यम (तुम) और अन्य (वह)" पुरुष-सर्वनामों के लिए अलग से कोई शब्द नहीं हैं। फिर भी जापानी में ऐसे अनेक शब्द हैं जो इनका काम करते हैं क्योंकि उनके बिना बातचीत सम्भव नहीं। आप किससे, कहाँ और किस बारे में बात कर रहे हैं यह महत्वपूर्ण है। यह इस पर ही निर्भर करेगा कि आप किस शब्द का चुनाव करते हैं। हिन्दी में भी आप अपने गहरे दोस्त को तो "तुम" या "तू" कह कर बुला सकते हैं पर अपने माता-पिता और गुरुजनों के लिए हमेशा "आप" का ही प्रयोग करेंगे। हाँ यह भी सही है कि विशेष परिस्थितियों में "माँ" को ही नहीं भगवान को भी "तू" कह कर पुकारा जा सकता है।

क्या पुरुष के अनुसार क्रिया पर भी असर पड़ता है? कई भाषाओं में बहुत, कुछ में थोड़ा बहुत और कुछ में कुछ खास नहीं। हिन्दी और अँग्रेज़ी के कुछ वाक्यों की तुलना से बात साफ होगी। अँग्रेज़ी में देखिए, 1 से 9 तक, चाहे पुलिंग हो या स्त्रीलिंग:

1. आई ईट एन ऐपल एवरीडे।
"I eat an apple everyday."
2. वी ईट एन ऐपल एवरीडे।
"We eat an apple everyday."
3. यू ईट एन ऐपल एवरीडे।
"You eat an apple everyday."
4. यू (बहु.) ईट एन ऐपल एवरीडे।
"You (pl.) eat an apple everyday."
5. दे ईट एन ऐपल एवरीडे।
"They eat an apple everyday."
6. शी/ ही /इट ईट्स एन ऐपल एवरीडे।
"She/ he/ it eats an apple everyday."

मज़ेदार बात है कि केवल वाक्य नम्बर 6 में ईट्स दिखाई देता है। वर्तमान काल में सभी लोग जैसे – "आई, वी, यू, दे" आदि "ईट" करते हैं, चाहे वे पुरुष हों या स्त्री, एकवचन हों या बहुवचन; केवल अन्य पुरुष एकवचन (वर्तमान काल) यानी "शी/ ही /इट" ही सेब को "ईट्स" करते हैं। कोई हैरानी की बात नहीं कि अँग्रेज़ी सीखनेवाले बच्चे "शी/ ही /इट" के साथ भी "ईट" का प्रयोग करते हैं। अगर आप यह बात समझ रहे हों तो फिर बच्चों पर झल्लाने की ज़रूरत नहीं। समय के साथ वे खुद यह अपवाद पकड़ लेते हैं।

हिन्दी की बात कुछ अलग है। वर्तमान काल में या अन्य जगह भी इस बात का

क्रिया पर पर बहुत असर पड़ता है कि हम पुरुष की बात कर रहे हैं या स्त्री की और इस बात का भी कि हम एकवचन की बात कर रहे हैं कि बहुवचन की। यही नहीं इस बात का भी बहुत फर्क पड़ता है कि हम विनम्रता के चलते “तू, तुम” की बात कर रहे हैं या फिर “आप” की। हिन्दी के कुछ वाक्य देखिए :

	पुलिंग	स्त्रीलिंग
1.	मैं रोज़ एक सेब खाता हूँ।	मैं रोज़ एक सेब खाती हूँ।
2.	हम रोज़ एक सेब खाते हैं।	हम रोज़ एक सेब खाती हैं।
3.	तू रोज़ एक सेब खाता है।	तू रोज़ एक सेब खाती है।
4.	तुम रोज़ एक सेब खाते हो।	तुम रोज़ एक सेब खाती हो।
5.	आप रोज़ एक सेब खाते हैं।	आप रोज़ एक सेब खाती हैं।
6.	वह रोज़ एक सेब खाता है।	वह रोज़ एक सेब खाती है।
7.	वे रोज़ एक सेब खाते हैं।	वे रोज़ एक सेब खाते हैं।

आप समझ ही रहे होंगे कि कोई अँग्रेज़ी भाषी अगर हिन्दी सीख रहा हो तो वह तो पागल ही हो जाएगा। क्रिया में ऐसे बदलाव तो उसने अपनी भाषा में कभी देखे ही नहीं। हिन्दी में यह बदलाव केवल वर्तमान काल में ही नहीं बल्कि भूत और भविष्य में भी होते हैं। ऊपर 1 से 7 वाक्य में हर बदलते सर्वनाम के साथ क्रिया बदलती है। कर्ता की कार्बनकॉपी क्रिया में भी रहती है। इसलिए हिन्दी में कर्ता का नाम न भी लें तो चलता है। कह सकते हैं: “रोज़ एक सेब खाता हूँ।” इसका अर्थ केवल यह ही हो सकता है कि “मैं” यानी “प्रथम पुरुष, पुलिंग, एकवचन”। स्त्रीलिंग होगा तो कहना पड़ेगा “रोज़ एक सेब खाती हूँ।” ऊपर दी गई तालिका को ध्यान से देखें तो सब साफ हो जाएगा। किस सर्वनाम के साथ कौन-सी क्रिया आती है इसका विश्लेषण करें तो आपको बहुत मज़ा आएगा।

वास्तव में “पुरुष” और उसके रूपों की कहानी और ज़्यादा जटिल है। वह फिर कभी। हैरानी तो इस बात की है कि बच्चे बिना किसी के कुछ सिखाए सब खुद ही सीख जाते हैं।

चित्र : दिलीप चिंचालकर

ईचक दाना बीचक दाना...

किशोर पँवार

ईचक दाना बीचक दाना-दाने ऊपर दाना ईचक दाना।
छज्जे ऊपर लड़की नाचे लड़का है दीवाना
ईचक दाना बोलो क्या?
अनार।

यह गाना तुमने भी सुना होगा। इसे शैलेन्द्र ने लिखा है। फिल्म "श्री 420"।

ईचक का मतलब क्या होता है? और बीचक का? बीचक मतलब क्या बीच में? और ईचक मतलब इर्द-गिर्द? यानी अनार के बीच में दाने हैं और बीच के आसपास भी दाने हैं। और सिर्फ आसपास ही नहीं ऊपर नीचे भी दाने हैं। अनार के भीतर समा न पा रहे दानों पर क्या खूब लिखा है! ये दाने दरअसल अनार के बीज हैं। जिन्हें हम रस लेकर खाते हैं। गुलाबी गूदा तो बीज का छिलका होता है रस भरा मीठा। चने का छिलका फीका-सूखा पर अनार के बीज के छिलके की तो बात भी रसभरी है।

पर ये तो हुई गाने की पहली लाइन। दूसरी लाइन को याद कीजिए – छज्जे ऊपर लड़की नाचे लड़का है दीवाना। अब अनार के पेड़ के पास जाकर उस पर लटकती नारंगी लाल कलियों और फूलों को देखिए। कवि शैलेन्द्र ने यह गीत सिर्फ कल्पना से ही नहीं लिखा था। अनार के पेड़ की टहनियाँ छज्जा है और उस पर एक नहीं कई लड़कियाँ नाच रही हैं। नारंगी लाल रंग का लहरदार क्रेप का स्कर्ट पहने। वैसे अनार का फल खाने योग्य नहीं है? जी हाँ, इसके केवल बीज खाए जाते हैं। वे भी इसके रसीले-माँसल बीज। और ये छिलके की बदौलत स्वादिष्ट हैं। वरना बीज बेसुआदे होते हैं।

इसी गीत को आगे याद करते हैं –
छोटी-सी छोकरी लाल बाई नाम है
पहने वो घाघरा एक पैसा दाम है
सबके मुँह में आग लगाए
आता है रुलाना ...
बोलो क्या?

मिर्च तो हरी भी होती है। पर इस पहेली में लाल मिर्च की बात है। इसका लाल रंग छिलके में होने वाले रंजक एंन्थोसायनिन के कारण होता है। यह वही रंजक है जो फूलों व फलों को लाल, पीला, नीला-जामुनी बनाता है। पहने वो घाघरा एक पैसा दाम है। कहाँ है घाघरा? हम विज्ञान में जिसे अँखुड़ियों का समूह केलिक्स कहते हैं वह शैलेन्द्र को मिर्ची का घाघरा नज़र आया। मिर्च, टमाटर और बैंगन सभी में फूल का केलिक्स पंखुड़ियाँ खिर जाने के बाद भी फल पर लगा रहता है। खाने के बाद जब मुँह में आग लगती है तो सब लोग सी-सी करते हैं यानी इसमें है विटामिन-सी।

तीसरा अन्तरा सुनो –

हरी थी मन भरी थी लाख मोती जड़ी थी
राजा जी के बाग में दुशाला ओढ़े खड़ी थी
कच्चे पक्के बाल हैं उसके मुखड़ा है सुहाना
बोलो क्या?

भुट्टा। (हालाँकि फिल्म नरगिस की इस पहेली का जवाब राजकपूर चुटकी लेते हुए देते हैं – बुड्ढी।)

फिर किसी लड़की की बात है हरी मन भरी। लाख मोती जड़ी। राजा जी का बाग है खेत किसी किसान का। वह राजा है अपने खेत का। उस हरी-भरी लड़की ने दुशाला ओढ़ रखा है। दरअसल दुशाला भुट्टे की मादा पुष्पक्रम के पत्ते के आधार हैं। नाव जैसे। इन्हें हम भुट्टे का छिलका भी कह सकते हैं। मक्का एक एकबीजपत्री पौधा है। जिस पर नर और मादा पुष्पक्रम अलग-अलग आते हैं। पौधे के सिर पर माँजर यानी नर पुष्पक्रम और नीचे पत्तियों की गोद में भुट्टा यानी मादा पुष्पक्रम लगता है। और इस दुशाले के अन्दर छिपे हैं सैकड़ों पीले रंग के चमकदार मोती। कितने करीने से सजे हैं ये मोती। कभी लगता है मोतियों की लड़ियाँ हैं। पर हैं तो वे मक्के के फल। जिन्हें हम दाने भी कह सकते हैं।

इस हरी-भरी लड़की के सिर पर लगे कच्चे-पक्के रेशे गीतकार को बाल नज़र आ रहे हैं। ये असल में मादा फूलों से बाहर निकली वर्तिकाएँ हैं। कच्ची हरी ताज़ी और पकने पर सुनहरी भूरी। चलते-चलते यह भी जान लें कि ये वर्तिकाएँ वनस्पति जगत में सबसे लम्बी होती हैं। यह गीत सिर्फ पेड़-पौधों पर ही नहीं रुकता। आगे सुनिए– एक जानवर ऐसा

जिसकी दुम पर पैसा
सर पे सुन्दर ताज भी
बादशाह के जैसा। ओ .....
बादल देखे
छम-छम नाचे
अलबेला मस्ताना
ईचक दाना ...

बारिश का मौसम हो। बादल गरज रहे हों, बिजलियाँ चमकती हों तो मोर का ख्याल तो आना ही है। मोर अपनी दुम पर इठलाता है। इसके पंखों पर बने रंग-बिरंगे चकत्ते गीतकार को आँख जैसे लगे। क्या तुमने कभी नर मोर को पंख फैलाकर नाचते देखा है? यह अनूठा नज़ारा होता है। इस दौरान मोर का इठलाकर चलना भी देखने लायक होता है। वैज्ञानिक पंखों पर बनी इन रचनाओं को आँख कहते हैं। ये नर मोर के पंखों में ही होती हैं। कहते हैं ये आँखें ही मादा मोर को आकर्षित करती हैं। क्या शादी-ब्याह में दूल्हा-दुलहन की टोपी पर मोर बाँधने का ख्याल यहीं से आया होगा?

चित्रः नीलेश गहलोत

दुम पर पैसों के साथ मोर के सिर पर एक बहुत ही खूबसूरत रंगीन मखमली नीले-फिरोज़ी रंग की कलगी भी होती है – बादशाह के ताज जैसी। क्या बादशाहों को सिर पर टोपी-पगड़ी, ताज सजाने का ख्याल कलाकार को मोर की ये कलगियाँ देखकर ही आया होगा?

क्या तुम किसी गीत की ऐसी ही कहानी सुनाना चाहोगे? सोचो, तुम्हें आम, नारंगी पर कविता लिखनी हो तो तुम क्या लिखोगे? इसी बात पर फिल्म "जागते रहो" का एक गाना याद आ गया-

रंगी को नारंगी कहे और बने दूध को खोआ
चलती को गाड़ी कहे, देख कबीरा रोया

कभी देखने की कोशिश करना कि –

1. इनके घोंसले कितने पत्तों को जोड़कर बनाए गए हैं?

2. क्या चींटियाँ एक घोंसले से निकलकर दूसरे घोंसले में जा रही हैं?

3. ऐसे कितने घोंसलों के बीच चींटियों का आना-जाना बना हुआ है?

4. अगर घोंसले में झाँकने का मौका मिले तो देखने की कोशिश करना कि एक घोंसले में अलग-अलग आकार की चींटियाँ दिखती हैं या नहीं। लेकिन सावधानी बरतना – वीवर काटती बहुत तेज़ हैं और फॉर्मिक ऐसिड भी छिड़कती हैं जिससे जलन होती है।

दर्ज़ी चींटियाँ

विनता विश्वनाथन

फर्श, दीवार, सड़क – कौन-सी जगह है जहाँ चींटियाँ नहीं दिखतीं! कुछ तो पौधों पर भी नज़र आ जाती हैं। ये लाल-नारंगी (कहीं-कहीं हरी भी) चींटियाँ वीवर ऐन्ट्स (दर्ज़ी चींटियाँ) हैं। ये पत्तों को जोड़कर अपने लिए घोंसला बनाती हैं। मज़दूर चींटियाँ लार्वे को अपने जबड़ों में पकड़ लेती हैं और लार्वा द्वारा छोड़ा गए चिपचिपे रेशम से पत्तियों को चिपका देती हैं। आम और अशोक के पेड़ों पर ये घोंसले दिख जाते हैं। क्या तुम किसी और पेड़ का नाम बता सकते हो?

बारिशों में तो चींटियाँ बहुत दिखती हैं – लाल, पीली, कत्थई, काली, सुनहरी, बड़ी, छोटी, पतली, मोटी, फुर्तीली, धीमी चाल वाली। कभी घूमने निकलो तो अपने आसपास को गौर से देखते जाना। बताना कि तुम कितनी तरह की चींटियाँ देख पाए। ज़मीन पर ढूँढना, झाड़ियों में झाँकना, दीवारों-दरवाज़ों-खिड़कियों में खोजना, घर-सड़क अलग-अलग जगह जाना। और हमें ज़रूर बताना कि तुम क्या-क्या देख पाए। तुमने जितना सोचा था चींटियाँ उससे कम मिलीं या ज़्यादा? तुम्हारे ख्याल में तुम्हारे इलाके में कितनी चींटियाँ रहती होंगी......

सभी चित्र इंटरनेट से साभार

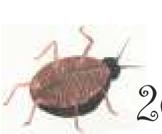

माथापच्ची

1 ज़मीन में गड़े इन चार डण्डों में किसे निकालना सबसे ज्यादा मुश्किल होगा और क्यों?

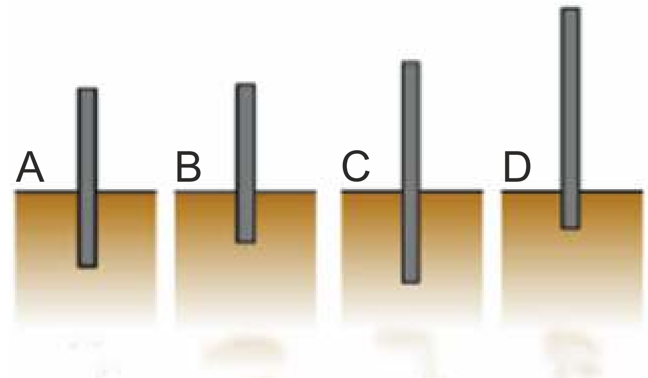

2 सारा के पास पानी की 21 बोतलें हैं जिसमें से 7 पूरी भरी, 7 आधी और 7 खाली हैं। उसे यह पानी 3 लोगों में इस तरह बाँटना है सभी को बराबर मात्रा में पानी और बराबर संख्या में बोतलें मिलें। क्या तुम उसकी कुछ मदद कर सकते हो?

3 चार दोस्त गर्मी की छुट्टियाँ मनाने एक हिल स्टेशन गए। उनकी छुट्टियों के दौरान 13 दिन भारी बर्फबारी हुई। जिस दिन सुबह बर्फ गिरती उस दिन दोपहर बाद मौसम साफ हो जाता और जिस दिन बर्फ शाम को गिरती तो अगली सुबह मौसम साफ रहता। उनकी छुट्टियों में कुल 11 दिन सुबह और 13 दिन शाम को मौसम साफ रहा। इस जानकारी के आधार पर तुम्हें बताना है कि उन्होंने वहाँ कितने दिन बिताए?

4

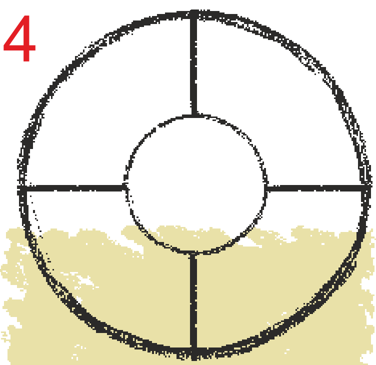

इस चित्र में तुम्हें इस तरह रंग भरना है कि आपस में छूते किन्हीं भी दो खानों में एक जैसे रंग ना हों। ऐसा करने के लिए कम से कम कितने रंग चाहिए?

5 किसी भी कागज़ को तुम अधिक से अधिक कितनी बार आधा मोड़ सकते हो?

6 एक बस कुल 40 मिनट में अपना रास्ता तय करती है। इसी रास्ते के लिए हर 10 मिनट में दोनों छोरों से एक-एक बस रवाना होती है। एक छोर से दूसरे छोर तक जाने में इस बस का कितनी बसों से सामना होगा?

बचपनयादें

चश्पनयादें

चित्रः नीलेश गहलोत

आँखों में काजल

लक्ष्मी

बड़ों ने बच्चों के लिए बहुत कुछ लिखा है, और क्या खूब लिखा है। अंकुर का यह नया स्तम्भ बच्चों का ही लिखा होगा। इसमें रोज़ाना की ज़िन्दगी डबडबाएगी और छलक कर बह जाया करेगी। घर-संसार, गली-मोहल्ले, स्कूल-बाज़ार, साहित्य-सिनेमा, टीवी- इन्टरनेट इन सबकी बातें होंगी। और ऐसी भी बात होगी जो शायद हम इस स्तम्भ के लेखक-लेखिकाओं से पहली बार सुनेंगे। बताते रहिएगा कि हम ठीक जा रहे हैं कि नहीं...

मैं पाँच साल की थी। मम्मी ने मेरा दाखिला स्कूल में करा दिया। उस समय मुझे स्कूल जाना अच्छा नहीं लगता था। मैडम से बहुत डर लगता था। सुबह जब मम्मी स्कूल छोड़ने आती थीं तब मैं उनसे चिपक जाती और कहती, "मुझे स्कूल नहीं जाना। मुझे घर जाना है।" मम्मी मुझे बिस्कुट का एक पैकेट खरीद कर देतीं। फिर मैं स्कूल चली जाती।

छुट्टी के समय जब मम्मी मुझे लेने आतीं तो वह बहुत सुन्दर लगती थीं। एक बड़ी-सी बिन्दी माथे पर होती, आँखों में काजल और होठों पर लिपस्टिक। उस समय वो मुझे दुनिया की सबसे सुन्दर मम्मी लगतीं। मैं उनसे रोज़ कहती कि मुझे भी काजल लगाना है। मम्मी कभी मेरी आँखों में काजल लगा देतीं तो कभी मना कर देतीं।

एक दिन स्कूल की छुट्टी थी। मम्मी हम भाई-बहनों को घर पर छोड़कर बुआ के घर जा रही थीं। मैं भी उनके साथ जाने की ज़िद्द कर रही थी। पर पापा ने कहा कि नहीं जाना है तो नहीं जाना है। मैंने रोना शुरू कर दिया। रोते-रोते मैंने देखा कि मम्मी अच्छीवाली साड़ी पहन रही हैं। साड़ी पहनकर ऊपर रखे डिब्बे से बिन्दी निकाली और लगा ली। फिर काजल की छोटी डिब्बी से एक उँगली काजल लिया और दूसरे हाथ की उँगली से आँख को बड़ा किया और काजल लगा लिया। काजल लगते ही आँख बन्द करके उसे थोड़ी देर के लिए मला। फिर होठों पर लिपस्टिक लगाते ही वे रोज़ की तरह सुन्दर बन गईं। मैं बड़े ध्यान से देख रही थी। मम्मी को देखते-देखते मैं रोना भूल गई।

मम्मी के जाते ही मैंने पटरा खींचा और उस पर चढ़कर डिब्बा उतारने लगी। पर मेरा हाथ वहाँ जा ही नहीं रहा था। फिर बक्से पर चढ़ गई और धीरे-धीरे डिब्बे को अपनी ओर खिसकाने लगी। बहुत मुश्किल से डिब्बा मेरी पकड़ में आया। मैंने उसे खोला और काजल की डिब्बी निकालकर जल्दी-जल्दी आँखों में काजल लगाने लगी। काजल की उँगली मेरी आँख के अन्दर चली गई। आँख में बड़ी ज़ोर-से दर्द हुआ। इसके बाद मैंने एक बार फिर उँगली में काजल लिया और आँख में लगा लिया।

अपनी शक्ल देखने के लिए मैं बाहर धूप में आई। और परछाई में अपनी शक्ल देखने की कोशिश करने लगी। पर आँख तो दिखाई ही नहीं दे रही थी। तभी मेरा भाई आ गया और मुझे देखकर हँसने लगा। उसकी हँसी इतनी ज़ोर की थी कि सब मुझे देखकर हँसने लगे। मुझे लग रहा था कि मैं मम्मी की तरह सुन्दर लग रही हूँ पर लोग हँस रहे थे।

मैं अपनी शक्ल देखने के लिए इल्मा के घर दौड़ी। उसके घर का शीशा नीचे ही लगा था। जैसे ही मैंने अपनी शक्ल देखी तो चौंक गई। मेरा मुँह काला हो रहा था। एक आँख में पतला तो दूसरी आँख में बहुत मोटा काजल लगा था। मेरे गाल काले हो रहे थे। मैंने जल्दी-से अपनी फ्रॉक उठाई और उससे मुँह पोंछने लगी पर काजल फैलता जा रहा था। मुझे डर लग रहा था कि मम्मी मुझे डाँटेंगी। भाई मुझे आवाज़ लगा रहा था, "बाहर आ, ज़रा तेरी शक्ल देखें। काली भूतनी की!"

अपनी शक्ल देखने के लिए मैं बाहर धूप में आई। और परछाई में अपनी शक्ल देखने की कोशिश करने लगी। पर आँख तो दिखाई ही नहीं दे रही थी।

मैं जल्दी-जल्दी मुँह साफ करने में लगी थी कि भाई अन्दर आ गया और बोला, "जा पानी से मुँह धो। बिलकुल काली लग रही है। आने दे मम्मी को फिर बताता हूँ उन्हें कि तूने उनका डिब्बा छुआ।" अब मुझे और भी डर लगने लगा। मैं पानी के ड्रम के पास दौड़ी और जल्दी-जल्दी मुँह धोने लगी। भाई को तो चिढ़ाने का मौका मिल गया था। मैं मुँह धोती जा रही थी और रोती जा रही थी। रोते-रोते मैं बिस्तर पर लेटकर कब सो गई पता ही नहीं चला।

रात को जब मम्मी, बुआ के घर से वापिस आईं तो उन्हें सबसे पहले काजलवाली बात ही बताई गई। मैं डर के मारे तख्त के नीचे छुप गई। मम्मी ने मुझे आवाज़ लगाई और बोलीं, "बाहर आ जा।" मैं बाहर आकर मम्मी की गोदी में बैठ गई। अभी भी काजल मेरी आँखों में दिख रहा था। मम्मी हँसते हुए बोलीं, "कुछ काजल बचा है या सब खत्म कर दिया।" यह सुनकर सब हँसने लगे। इस बार मुझे भी हँसी आ गई। चक मक

लक्ष्मी, पाँचवीं में पढ़ती हैं।

रहमत का फरिश्ता

प्रियंवद

"एक था बौड़म, वह चला ससुराल..." कहानी इसी तरह शुरू होती थी।

देर रात, हम घर की तीसरी मंज़िल पर, छत पर बनी रसोई में होते थे। मिट्टी के चूल्हे पर लोहे की बड़ी कड़ाही चढ़ी होती थी। उसमें दूध उबलता रहता था। चूल्हे के पास बैठा सत्यनारायण बीच-बीच में कलछुल से दूध हिलाता रहता था। कोयलों की आँच धीमी पड़ती, तो झुककर फुँकनी से फूँक मारकर उसे सुलगाता। पास ही लकड़ी के पटरे पर बैठा हुआ मैं, बेसब्री से कहानी आगे बढ़ने का इन्तज़ार करता था।

तुम मई से कथाकार प्रियम्वद की लिखी कहानियाँ पढ़ रहे हो। ये सभी एकदम ताज़ा कहानियाँ हैं। तक्षशिला एजुकेशनल सोसाइटी ने इस वर्ष से बालसाहित्य लेखन के लिए बालसाहित्य सृजनपीठ शुरू की है। सम्भवतया बालसाहित्य में यह अपने तरह का पहला प्रयास है। इसके तहत हिन्दी के दो रचनाकारों को बालसाहित्य (कथासाहित्य तथा गैर कथा साहित्य दोनों) लेखन के लिए फैलोशिप दी जाएँगी। कथाकार प्रियम्वद इसी पीठ में रहकर बच्चों के लिए विविध सामग्री रच रहे हैं। चकमक में तुम इस पीठ के तहत लिखी गई चुनिन्दा रचनाएँ पढ़ोगे। कथाकार प्रियम्वद अलग-अलग शहरों में ये कहानियाँ सुनाने भी आ रहे हैं। अगर तुम अपने शहर, कस्बे या गाँव में ये कहानियाँ सुनना चाहो तो हमें लिखना - चकमक

यह साल की कोई भी ऋतु हो सकती थी। पर समय हमेशा देर रात का होता था। घर का सब काम खत्म करने के बाद, सत्यनारायण का आखिरी काम सोने से पहले घर के सब लोगों को दूध पिलाना था। घर में चौदह लोग थे। मैं सबसे छोटा था। दस-बारह साल का। सबके लिए दूध उबालने में समय लगता। उसी समय मैं रोज़ उसके पास बैठता। वह रोज़ एक नई कहानी सुनाता। पर हर कहानी का पहला वाक्य यही होता, "एक था बौड़म, वह चला ससुराल...।" इसके बाद हर बार कहानी नए तरीके से आगे बढ़ती। बौड़म का अपनी ससुराल जाना, रास्ते में, ससुराल में, वापसी में, कहीं भी उसके साथ रोज़ कुछ न कुछ होता रहता। इसी के साथ रोज़ रात को मेरे अन्दर नई दुनिया नई कल्पनाएँ, नए चरित्र जन्म लेते।

"हुँकारा नहीं भरोगे तो नहीं सुनाऊँगा।" कहानी में डूबकर कभी मैं चुप हो जाता और हर वाक्य के बाद हुँ-हुँ करना भूल जाता तो सत्यनारायण टोक देता।

दूध उबलता रहता। उबल जाता। वह उन्हें गिलासों में या किसी दूसरे बर्तन में डालता। सम्भलकर, धीरे-धीरे सँकरी सीढ़ियों से नीचे उतरता। सबके पास जाता। दूध पकड़ा देता या सिरहाने रख देता। मैं उसके पीछे-पीछे घूमता रहता।

"फिर ठगों ने क्या किया?"

"फिर ठगों ने बौड़म को टूटी खाट पर बैठने को कहा। खाट पर चादर बिछी थी। उसके नीचे गहरा गड्ढा था। बौड़म खाट की तरफ बढ़ा...।" उसकी कहानी चलती रहती।

सबको दूध देने के बाद वह वापस रसोई में आता। मैं भी उससे चिपका चलता रहता। फिर? सबसे आखरी में मेरा दूध पीने का नम्बर आता। दूध खत्म होते ही सत्यनारायण कहानी खत्म कर देता। दूध खत्म, कहानी खत्म, घर के सब काम खत्म। मुझे नीचे लाकर बिस्तर पर लिटा देता।

"सुबह रहमत के फरिश्ते आते हैं। जल्दी उठना। सोते रहे तो लौटे जाएँगे।" यह उसका आखरी वाक्य होता। वह भी सोने चला जाता।

बहुत-सी ऋतुएँ आईं गईं। बहुत से फूल खिले मुरझाए। बहुत से बूढ़े सितारे टूटे, नए जन्मे। बारिशें हुईं खत्म हुईं। फसलें पकीं कटीं। नदियाँ उफनाईं सूखीं। सब बदला पर यह सिलसिला नहीं बदला। न मिट्टी का चूल्हा, न लोहे की कड़ाही, न कहानी का पहला वाक्य, न हुँकारा और न ही सुबह रहमत के फरिश्तों के आने से पहले जाग जाने की हिदायत।

फिर एक दिन अचानक सत्यनारायण हमेशा के लिए गाँव चला गया। कुछ सालों बाद मैं भी कॉलेज गया, पढ़ाई की, जीवन की आपाधापी और दौड़ में उतरा।

लेखक बन गया। कहानियाँ, उपन्यास लिखने लगा। लोग प्रशंसा करते थे। रचनाओं की प्रतीक्षा करते थे। तब अन्दर एक सन्तोष देनेवाला अहंकार भर जाता। कभी अकेला होता, तो यादों के झुरमुटे में अकसर बहुत से चेहरे घूमते। इनमें सत्यनारायण भी होता। चूल्हा, कड़ाही, हुँकारा और रहमत के फरिश्ते भी होते। समय नदी की तरह बहता रहा। कभी तेज़, कभी ठहरा हुआ-सा। कहानियाँ लिखने ने मुझे यश, सम्मान दिया। मैं सन्तुष्ट था। सफल था। हलका-सा अभिमान रहने लगा था। ऐसे ही चालीस साल बिताए।

तेज़ बारिश हो रही थी। खिड़की पर बैठा मैं बारिश देख रहा था। मैंने देखा गली के अन्दर एक आदमी आया। उसने सर को प्लास्टिक के बड़े टुकड़े से ढँक रखा था। रुककर उसने एक बार सीधे मेरे घर की तरफ देखा। फिर घर के दरवाज़े तक आ गया। दरवाज़े के बाहर उसने गीले जूते उतारे। प्लास्टिक रखी। हथेलियों से बदन का पानी पोंछा। कपड़ों को झटका। वह यह सब कर रहा था। मैं देख रहा था। उसके बाल सफेद थे। बदन दुबला-पतला। जाली के बाहर चेहरा साफ नहीं था। उसने जाली से मुँह चिपकाकर अन्दर झाँका।

"आ जाइए।" मैंने कहा।

उसने दरवाज़ा खोला। अन्दर आया। मुझे देखकर उसकी आँखों में चमक आ गई। होंठ फैल गए। मुस्कराते हुए, चमकती आँखों से कुछ देर मुझे देखता रहा।

"रहमत के फरिश्ते मिले कभी?" वह धीरे-से बोला। मैंने एक क्षण उसे देखा फिर कुर्सी से उछल पड़ा। मेरा बदन काँपने लगा।

चित्र : जोएल गिल

"सत्यनारायण!" आगे बढ़कर मैं उससे चिपक गया। उसने मुझे गले लगा लिया। "कैसे हो भैय्या?" उसकी आवाज़ रुँध गई।

"ठीक हूँ..." मैं अलग हुआ, "तुम... इतने साल बाद अचानक... ठीक से हो न?" वह कुछ नहीं बोला। मैंने उसे कुर्सी की तरफ बैठने का इशारा किया। उसके कपड़े गीले थे। बैठने में संकोच कर रहा था।

"मैं कपड़े देता हूँ। बदल लो"

"नहीं इतने गीले नहीं हैं।" सत्यनारायण बैठ गया। मैं भी। कुछ देर बाद वह बोला।

"मैं अपने बेटे-बहू के साथ ट्रेन से आगे जा रहा था। यहाँ से कुछ स्टेशन पहले बहू की तबियत अचानक बहुत खराब हो गई। रेलवे के लोगों ने यहाँ स्टेशन पर उतार लिया। यहाँ के सरकारी अस्पताल में ले जाने को कहा। हम अस्पताल ले आए। किसी तरह भर्ती भी करा दिया। पर यहाँ बहुत भीड़ रहती है। कोई देखने-सुननेवाला नहीं है। न दवा, न डॉक्टर, न खाना। जनाना वार्ड है इसलिए हम वहाँ जा भी नहीं सकते। वहाँ वह अकेली है बिलकुल। मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। तभी सोचा शायद यहाँ अभी घर हो। शायद कोई रहता हो... या तुम हो। बस इसी उम्मीद से चला आया।" चुप होकर सत्यनारायण ने एक साँस ली फिर बोला, "हमने गाँव खबर कर दी है। हमारे और लोग आ जाएँगे। अभी बस उसकी देख-भाल इलाज ठीक हो जाए। इतना भर कि हम उसे गाँव वापस ले जाएँ। कोई जनाना वार्ड में उसे देख ले।" चुप होकर सत्यनारायण ने अब सीधे मेरी आँखों में देखा। उसकी आँखों में दुविधा संकोच, बेचैनी थी।

"सब हो जाएगा।" मैंने कहा। मेरी एक पत्रकार मित्र बड़े अखबार में मेडिकल बीट देखती थी। मैंने उसे फोन किया। पूरी बात समझाई। कह दिया कि अभी चली जाए। इलाज का पूरा इन्तज़ाम करवा दे। डॉक्टर से बात कर ले। ये सब बातें मैंने सत्यनारायण के सामने कीं। सत्यनारायण ने सन्तोष और राहत की लम्बी साँस ली।

"तुम मेरे पास रुको।" मैंने सत्यनारायण से कहा।

"नहीं भैय्या... रुकूँगा नहीं... बेटा अकेला घबराएगा। कल लोग आ जाएँगे तो मैं लौट भी जाऊँगा।" अब सत्यनारायण ने बदन को कुर्सी पर ढीला छोड़ दिया था। उसके चेहरे पर चमक और होंठों पर मुस्कान फिर से लौट आई थी।

"क्या करते हो?"

मैं थोड़ा सकुचाया फिर बोला, "कहानियाँ लिखता हूँ।"

सत्यनारायण ने चौंककर मुझे देखा। उसकी आँखों की चमक बढ़ गई थी।

"सचमुच?"

"हाँ... क्या तुम अभी भी कहानियाँ सुनाते हो?"

"हाँ...घर में, गाँव में बच्चों को।"

"रोज़ एक नई कहानी?"

"हाँ।"

"तुम्हें कैसे इतनी कहानियाँ याद हैं?"

वह एक क्षण चुप रहा फिर मुस्कराया

"कोई याद नहीं है।"

"फिर?"

"तुम्हें याद है कहानी सुनाते समय मैं तुम से हुँकारा भरवाता था?"

"हाँ।"

"जितनी देर में सुननेवाला हुँकारा भरता है, मैं आगे की कहानी सोच लेता हूँ।"

मुझे यकीन नहीं हुआ।

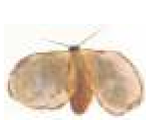

"क्या अभी कोई कहानी सुना सकते हो?"

सत्यनारायण हँसा, "हाँ... जब कहो।"

मैं फटी आँखों से सत्यनारायण को देख रहा था। मेरे अन्दर का गर्वीला कहानीकार ढह रहा था। एक कहानी लिखने में कितनी मेहनत, कितना समय, कितनी कच्ची-पक्की और उस पर भी कितना अहंकार?

"तुम अपनी कहानियाँ किसे सुनाते हो?" सत्यनारायण ने पूछा।

"किसी को नहीं...कहानियाँ अब सुनी नहीं पढ़ी जाती हैं।"

"सामने कोई हुँकारा नहीं भरता?"

"नहीं।"

"कोई बच्चों को कहानियाँ नहीं सुनाता?"

"नहीं।"

"तुम?"

"नहीं।"

"फिर?"

"फिर क्या?"

"तो बच्चों को माँ-बाप सुलाते कैसे हैं? सोते हुए बच्चे अकेले होते हैं। हम उनकी नींद में नहीं जा सकते। पर ये कहानियाँ तो जा सकती हैं। बच्चों को अकेला होने से बचा सकती हैं। हज़ारों रंग और उड़ानें और ज़िन्दगी का जादू ...

याद रखना, ईश्वर बनने से पहले सबने ऐसी कहानियाँ सुनाई हैं तब लोगों ने हुँकारा भरा है और फिर उन्हें ईश्वर माना है।" सत्यनारायण झटके से चुप हो गया। देर तक चुप रहा। कमरे में सन्नाटा छा गया।

"तुम्हारी कहानियों में तो यह सब है न?" अचानक उसने पूछा। अब फिर वह सीधा मेरी आँखों में देख रहा था। मैंने सर झुका लिया। सत्यनारायण ने मुझसे नज़र हटा ली। खिड़की के बाहर देखा। बारिश बन्द हो गई थी। वह उठ गया। उसने मुझे गले लगाया। अलग हुआ तो उसकी आँखों में पानी था। मेरी भी। उसने आँखें पोंछीं और चला गया।

गली के बाहर तक मैं उसे जाते देखता रहा। सोच रहा था कि सत्यनारायण गलत कहता था...रहमत के फरिश्ते सिर्फ सुबह ही नहीं आते।

प्यारे भाई रामसहाय

(पेज 11 का शेष)

कुछ दिन बाद बालकिशन ने बताया कि सरवन की तबीयत बहुत खराब है। उसे पीलिया हो गया है। वह अस्पताल में भर्ती है। मैं और राधेश्याम कल उसे देखकर आए हैं।

राधेश्याम बोला, "सरवन गलत संगत में पड़ गया है। पी-पीकर उसने अपने कलेजे का सत्यानाश कर लिया है। नर्स कह रही थी कि बचेगा नहीं।"

हमने कहा कि रविवार को हम सब उसे देखने अस्पताल जाएँगे।

लेकिन वह रविवार कभी नहीं आया। शनिवार को हमें खबर मिली।

हम धक से रह गए! विश्वास नहीं हुआ। हमारे साथ का हँसता-खेलता सरवन अचानक इतनी जल्दी मर कैसे सकता है!

प्यारे रामसहाय, आज जब मैं तुम्हें सरवन के बारे में लिखने बैठा हूँ, एक सवाल मुझे बहुत परेशान कर रहा है। मैं सोच रहा हूँ कि उन्नीस साल के उस होनहार कलाकार की मौत का ज़िम्मेदार कौन था? शराब? या बीमारी? या अचानक मिल गई शोहरत और पैसा? या उसका अनूठापन? या व्यास सर?

या मैं??

पता नहीं!

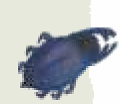

मम्मी, ...सूसू

नेहा सिंह

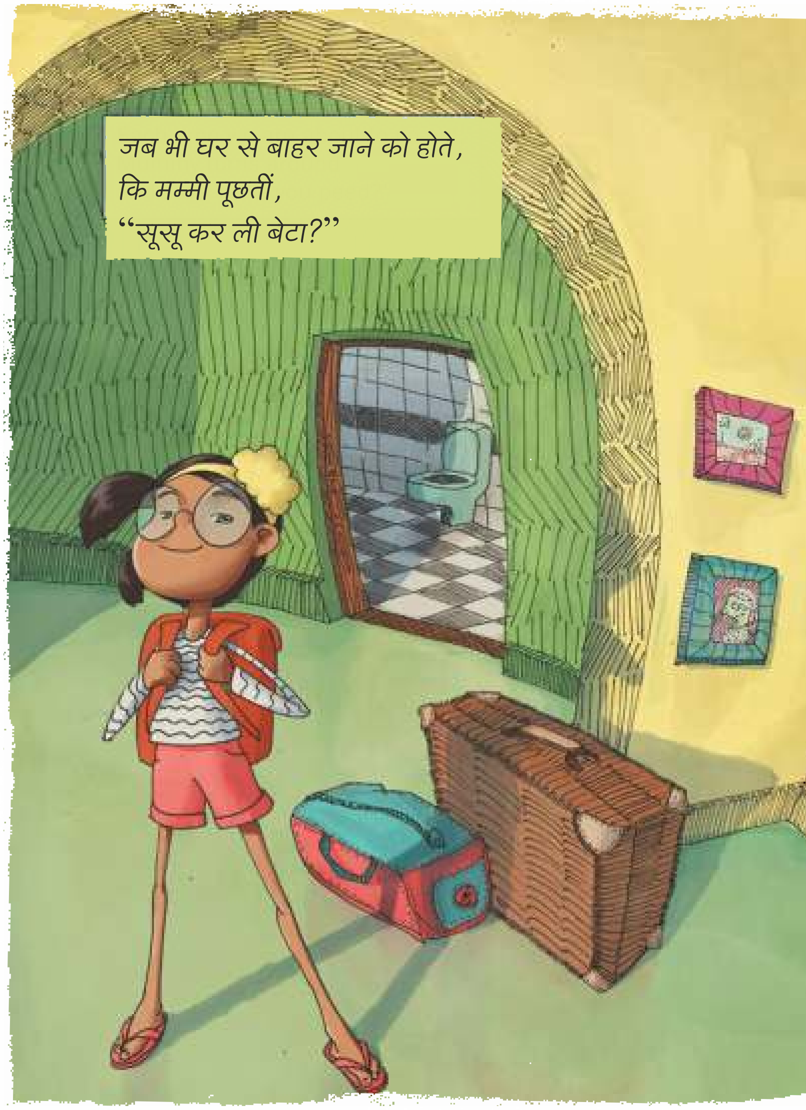

जब भी घर से बाहर जाने को होते,
कि मम्मी पूछतीं,
"सूसू कर ली बेटा?"
मम्मी को हरदम एक ही चिन्ता सताती,
कि बाहर निकलते ही,
ट्रेन में,
बस में,
सड़क पर,
कार में,
हवाईजहाज़ में,
मैं बोल पड़ूँगी,
"मम्मी, सूसू आई है।"

हर मम्मी-पापा को ये ही चिन्ता सताती है,
पर जब मेरी बात आती है,
तो चिन्ता और बढ़ जाती है,
वो क्या है न,
मुझे पानी, नरियल पानी,
निम्बू पानी, फ्रूट जूस,
सेब, सन्तरा, अनार और अनानास,
सब बहुत पसन्द हैं।
स्कूल में टीचर कहती हैं
"छोटे बच्चों को खूब सारे लिक्विड्स पीने चाहिए, अच्छा है।"
पर जब मेरी बात आती है,
तो अच्छा नहीं होता
क्योंकि हर बार जब मैं कुछ पीती हूँ,
तो कुछ देर बाद कह उठती हूँ,
"मम्मी, सूसू आई है।"

अभी की ही बात लो,
मैं, मम्मी और मेरा छोटा भाई तनय,
हम तीनों जा रहे थे मेघालय,
अपनी मौसी के घर,
यहाँ से मेघालय बहुत दूर है।
हम ट्रेन में थे और मैंने एक नरियल का पानी गटक लिया।
और फिर कह दिया,
"मम्मी, सूसू आई है।"
मम्मी ने गुस्से से देखा और ले गई ट्रेन के टॉयलेट में,
बहुत बदबू आ रही थी,
तो मैंने मुँह में बहुत सारी साँस भर ली,
नाक बन्द की और घुस गई अन्दर,
मम्मी हमेशा सफर में मुझे शॉर्ट्स पहनाती हैं,
ताकि कपड़े टॉयलेट में गन्दे न हो जाएँ।
मम्मी हैं बड़ी समझदार।

ट्रेन सरपट भाग रही थी,
गुड-गुड, गुड-गुड, गुड-गुड
ट्रेन के टॉयलेट के बड़े से छेद से,
मुझे धरती भी तेज़ भागती हुई दिख रही थी।
मिट्टी, पत्थर, घास, पटरी, सब
मेरा सर घूमने लगा, पर मैं ये अद्‌भुत नज़ारा देखती रही।
फिर जब साँस खत्म हो गई तो फट से बाहर आ गई।
"अब पीने के लिए पानी-वानी कुछ नहीं मिलेगा तुम्हें।"
मम्मी ने चेतावनी दी।
तब मैंने अपनी किताब निकाली, जिसका नाम है
"बहुत ज़रूरी बातोंवाली किताब"
मैंने किताब में पढ़ा,
"हर बच्चे को जब भी प्यास लगे, तो उसे पानी दे देना चाहिए।"
मम्मी ने मेरी किताब ली और उसे मेरे ऑरेंज बैग में ठूँस दिया।
मेरा भाई तनय ये देख खूब हँसा।
कुछ देर बाद हम गुवाहाटी स्टेशन पर उतरे।
बहुत ही सुन्दर है वो स्टेशन, मुम्बई स्टेशन से बहुत छोटा।
मुझे फिर सूसू लग आई। क्योंकि मैंने ट्रेन में ठण्डा-ठण्डा निम्बू पानी जो पी लिया था।
"फिर से? तुम अभी तो गई थीं।" मेरा भाई चिल्लाया।
समय आ गया था फिर से "बहुत ज़रूरी बातोंवाली किताब" निकालने का।
मैंने किताब से पढ़ा,
"छोटे भाइयों को अपनी बहनों के बार-बार टॉयलेट जाने का मज़ाक नहीं बनाना चाहिए।"
तनय को लगता है कि इस किताब में लिखी हर बात मैंने ही अपने मन से लिख दी है।
पर ये सच नहीं।
स्टेशन के ठीक सामने एक फाइव स्टार होटल था।
मैंने मम्मी का हाथ पकड़ा और उस ओर चल पड़ी।
"माफ कीजिए, मुझे टॉयलेट जाना है।"
मैंने उस होटल के सात फुट ऊँचे चौकीदार से कहा।
"माफ कीजिए, सिर्फ टॉयलेट जाने के लिए अन्दर नहीं जा सकते।" वो अकड़कर बोला।
"जा सकते हैं।" मैंने अपनी वही किताब निकाल ली।
"कोई भी होटल किसी को उनके टॉयलेट जाने या पानी पीने से मना नहीं कर सकता। ऐसा कानून में लिखा है।" मैंने पढ़ा।
ये सुनकर चौकीदार की हवाइयाँ उड़ गईं।
मैंने चुपचाप अपनी किताब अपने ऑरेंज बैग में रखी और होटल के अन्दर चली गई।
टॉयलेट बहुत साफ, सुन्दर और खूबसूरत था।
टॉयलेट जाने के बाद मैंने सुन्दर रिशेप्सनिस्ट से कहा –
"एक्सक्यूज़ मी, एक ठण्डे पानी का गिलास मिलेगा क्या?"
उसने मुझे ऊपर से नीचे तक घूरा। फिर मुस्कराकर एक गिलास ठण्डा पानी दिया।
मम्मी गुस्से-से लाल हो चुकी थीं।
"अब चलें।" उन्होंने खीझते हुए कहा।

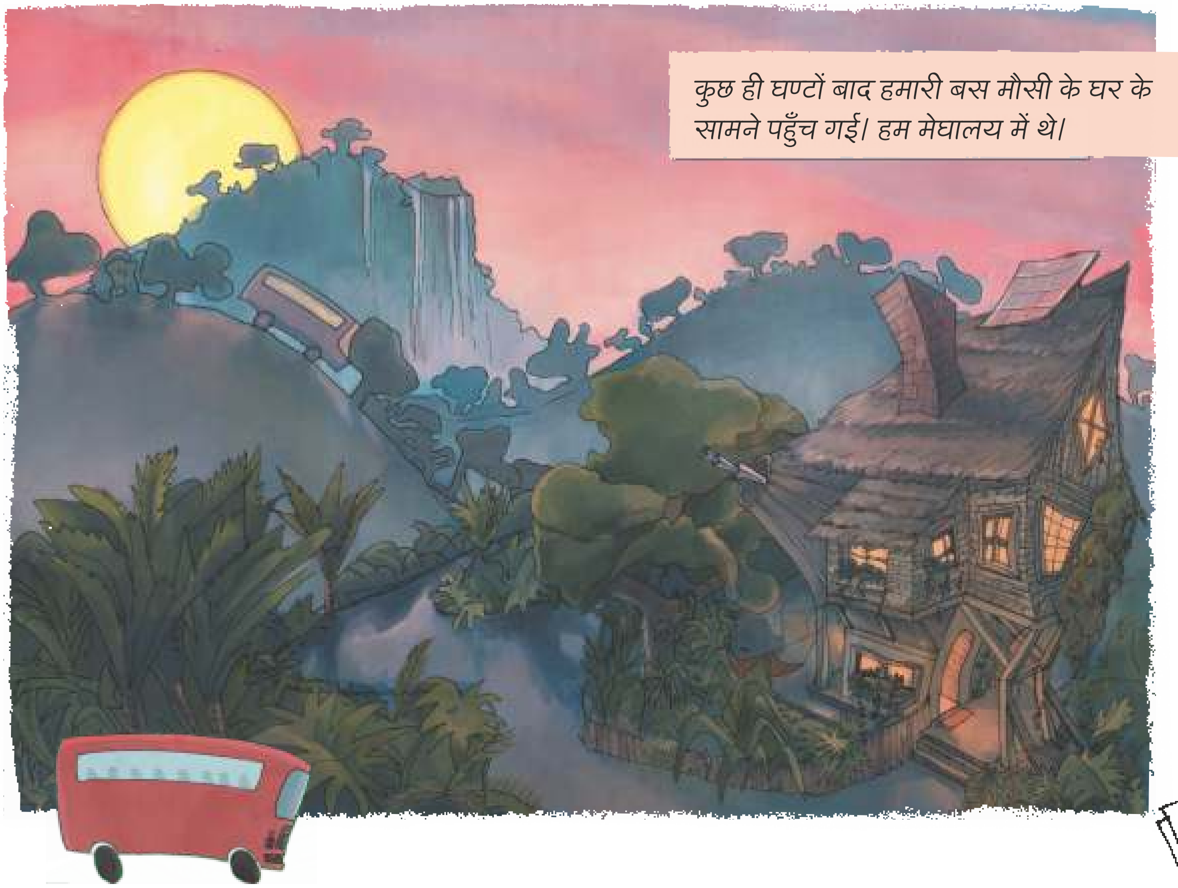

मैंने अपनी “बहुत ज़रूरी बातोंवाली किताब” निकाली और पढ़ा, “बच्चों को हमेशा साफ, सुथरे और सेफ टॉयलेट ही मिलने चाहिए।”

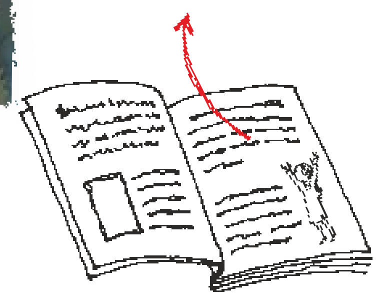

हम गुवाहाटी से मेघालय जानेवाली बस में बैठ गए।
और मुझे फिर प्यास लग गई।
मीठा-मीठा अनानास का जूस पी गई।
इस जगह पर बहुत सारे अनानास के खेत हैं।
तुम्हें पता है, मुझे लगता था कि अनानास पेड़ पर उगते हैं।
मेरी कल्पना में वो पाइन के पेड़ों पर, सेब जैसे उगते थे।
मैं भी न।
ये सोचते-सोचते फिर वही हुआ जिसका मम्मी को डर था।
मैंने कहा, “मम्मी, सूसू आई है।”
पर बस ड्राइवर ने बस नहीं रोकी।
फिर क्या था, मैंने अपनी किताब निकाली और ज़ोर-ज़ोर से पढ़ा।
“जब छोटी लड़कियों को टॉयलेट जाना हो तो, बस ड्रायवर को फौरन बस रोक देनी चाहिए।”
ये सुनते ही बस ड्रायवर के कान खड़े हो गए। ब्रेक पर पैर रखा और उसने बस रोक दी।
मम्मी मुझे पास ही के पब्लिक टॉयलेट में ले गईं।
इतनी देर से रोके थी।
बहुत सारी सूसू करी।

कभी-कभी पब्लिक टॉयलेट्स से डर लगता है।
जब उनके दरवाज़ों की चटकनी नहीं लगती।
खिड़कियों के शीशे टूटे होते हैं।
लाइट नहीं जलती।
ऐसा लगता है कोई अन्दर झाँक रहा है।
मुझे ऐसे टॉयलेट बिलकुल पसन्द नहीं।
मैं मम्मी से कहती हूँ मुझे अच्छे टॉयलेट में ही लेकर जाओ।
और मम्मी ऐसा ही करती हैं।
मेरी मम्मी बहुत अच्छी हैं।

कई बार मैं सूसू करते-करते गिनती गिनती हूँ।
अब तक सबसे ज़्यादा पैन्तीस तक गिन पाई हूँ।
आज अभी सिर्फ पच्चीस तक गिनती गिनी।

जब सूसू कर के बाहर आई तो काउन्टर पर औरत बोली, "बीस रुपए दो।"
पर बोर्ड पर लिखा था, "टॉयलेट के पाँच रुपए।"
वो चिढ़ गई और चिल्लाई,
"वो सब मैं कुछ नहीं जानती बीस रुपए दो।"
अब तो आपको पता चल ही गया होगा कि मैंने क्या किया।
मैंने अपनी किताब निकाली और पढ़ा।
"बड़े लोगों को छोटे लोगों से झूठ नहीं बोलना चाहिए।"
उसका मुँह खुला का खुला रह गया। पर आवाज़ नहीं निकल पाई।
मैंने उसके टेबल पर पाँच का सिक्का रखा और चली आई।
कुछ ही घण्टों बाद हमारी बस मौसी के घर के सामने पहुँच गई।
हम मेघालय में थे।
मुझे मौसी के घर का टॉयलेट बहुत अच्छा लगा।
वो एक पहाड़ी पर बना है।
एक लम्बा गहरा गड्ढा है। उसमें सूसू कर के ऊपर से मिट्टी डालते हैं।
खुरपी से मिट्टी उठाकर डालने में बड़ा मज़ा आता है।
जैसे मैं किसान हूँ जो खेत जोत रही है।
इस टॉयलेट को "ड्राई टॉयलेट" कहते हैं।
काश शहर में हमारे घर भी ड्राई टॉयलेट होता।
मम्मी कहती हैं ये टॉयलेट सबसे नैचुरल हैं, अच्छे हैं, प्रदूषण से बचे हुए हैं।
मौसी के घर आकर बहुत अच्छा लग रहा है।
अब मम्मी मुझे पानी, जूस, निम्बू पानी पीने से मना नहीं करेंगी।
आखिरकार मैंने फिर से अपनी किताब निकाली।
"बहुत ज़रूरी बातोंवाली किताब" और पढ़ा,
"सभी बच्चों को हमेशा साफ, सुथरे और सेफ टॉयलेट ही मिलने चाहिए।"

चित्रः मीनल सिंह, एरिक एगिरप

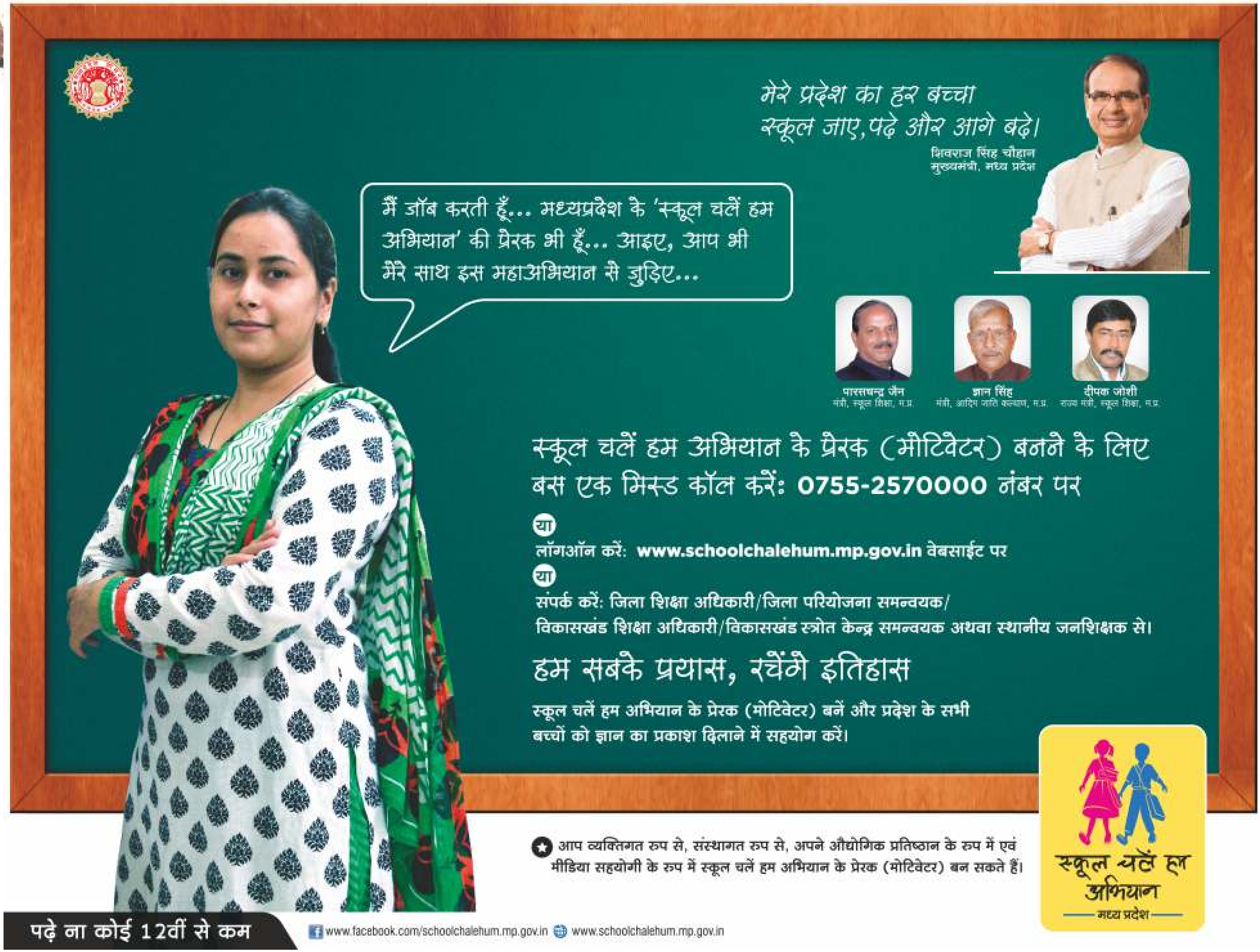

D-79299 दिनांक - 4 अगस्त 2016

एक था हाजी एक था नाजी

स्वयं प्रकाश

एक दिन नाजी का मूड बहुत खराब था।

सुबह सोकर उठे तो पता चला आज चाय नहीं मिलेगी क्योंकि गैस खत्म हो गई है।

किसी तरह कपड़े पहने, गले में मफलर लपेटा और घर से थोड़ी दूर वाले हाजी रेस्टोरेंट में पहुँच गए। वो अभी-अभी खुला था।

“चाय!” उन्होंने वेटर से कहा।

वेटर चला गया और नाजी चाय का इन्तज़ार करने लगे।

अभी पाँच मिनट ही हुए होंगे कि नाजी चिड़चिड़े सुर में बोले, “अरे, चाय लाओ न यार। आधे घण्टे से वेट कर रहे हैं!”

उनकी चिड़चिड़ाहट भरी आवाज़ को बड़ी शान्ति से सुनकर होटलमालिक हाजी ने भीतर की तरफ मुँह करके नौकर से कहा, “अरे भाई, चाय लाओ! देखते नहीं, भाईसाहब आधे घण्टे से कुत्ते की तरह भौंक रहे हैं!”

फिर धीरे-से जोड़ा, “तुम इस तरह काम करोगे तो कौन उल्लू का पट्ठा आएगा हमारे होटल में!”

नाजी अमरीका होकर आए तो उनसे वहाँ के किस्से सुनने की होड़ लग गई।

रोज़ रात को नाजी के घर या पड़ोस में हाजी के घर महफिल जमती और नाजी अमरीका के एक से एक हैरतअँगेज़ किस्से देर रात तक सुनाते।

एक दिन हाजी ने पूछा, “यार अमरीका में सड़कें ऐसी और गलि ऐसी तो हम बहुत सुन चुके, आज किसी ऐसी चीज़ के बारे में बताओ जो तुमने वहाँ देखी हो और तुम्हें अपनी आँखों पर और अकल पर भरोसा ही नहीं हो रहा हो!”

नाजी ने कुछ सोचकर कहा, “हाँ, थी एक ऐसी चीज़।”

सबने कहा, “तो सुनाइए।”

नाजी बोले, “आज मैं तुम्हें एक ऐसे आदमी के बारे में बताऊँगा जो जब चाहे मर जाता है जब चाहे दोबारा ज़िन्दा हो जाता है। उसका नाम है डोन्नोमेन। पूरा नाम है – आई. डोन्नोमेन।”

“हैं!!” सबको बड़ा ताज्जुब हुआ। “ऐसा कैसे हो सकता है?”

नाजी बोले, “हुआ ये कि वॉशिंग्टन में मैंने एक आदमी का जनाज़ा देखा। तो मैंने अपने टैक्सीवाले से पूछा कि भई, कौन मर गया? तो उसने कहा, ‘डोन्नोमेन।’ फिर मैं डिज़्नीलैंड गया। वहाँ एक छोटे बच्चे का जन्मदिन मनाया जा रहा था। मैंने पास खड़ी एक महिला से पूछा कि भेनजी, किसका जन्मदिन मनाया जा रहा है? तो वह बोली, ‘आई. डोन्नोमेन।’ फिर मैं न्यूयॉर्क गया। वहाँ एक चर्च में किसी की शादी हो रही थी। मैंने पास खड़े एक लड़के से पूछा कि किसकी शादी हो रही है? तो वह बोला, ‘डोन्नोमेन।’ मैं समझ गया और हैरान रह गया कि देखो! कैसा चमत्कारी आदमी है ये डोन्नोमेन! वॉशिंग्टन में हमारे सामने इसकी मौत हो गई थी, फिर डिस्नीलैंड में पैदा हो गया और न्यूयॉर्क में पट्ठा शादी करने बैठ गया। है न अजब-गजब?”

चित्रः मयूख घोष

योगेन्द्र, पाँचवीं, एपीएफ स्कूल उत्तरकाशी

मेरा पन्ना

जंगल की लड़की

एक लड़की थी। एक दिन वह जंगल गई और फिर खो गई। उसके मम्मी-पापा ने उसको बहुत ढूँढा। लेकिन वो मिली नहीं। जंगल में लड़की को थोड़ा डर लगा तो वह एक पेड़ पर चढ़ गई। पेड़ पर गुलबाघ था। लड़की उसको देखते ही डर के मारे पेड़ से गिर गई। गुलबाघ बोला "डरो मत।" और जाकर उसे उठाया। लड़की और गुलबाघ की दोस्ती हो गई। गुलबाघ का एक और दोस्त था साही। जब साही गुलबाघ से मिलने आया तो लड़की ने उसको बिही तोड़कर दिए। फिर लड़की की साही से भी दोस्ती हो गई। वह खूब पेड़ों से तोड़कर फल खाती और दोस्तों को भी खिलाती। फिर एक दिन बाघ आ गया। लड़की फिर से थोड़ा डर गई। लेकिन गुलबाघ और साही ने मिलकर उसे भगा दिया और अपनी दोस्त को बचा लिया।

- रामकुमार, आठवीं, जबलपुर, म. प्र.

पूछती है पूँछ

कुत्ते की पूँछ, पूछती है कुत्ते से
गाय की पूँछ, पूछती है गाय से
बन्दर की पूँछ, पूछती है बन्दर से
घोड़े की पूँछ, पूछती है घोड़े से
शेर की पूँछ, पूछती है शेर से
तेरा पेट तो खराब नहीं है ना?
दिन भर बदबू सुँघवाओगे
सारा दिन बरबाद करवाओगे

प्रस्तुति - पिंकल कुमार, पाँचवीं,
ग्राम खेमभटकन, उ. प्र.

– विदिशा, सात वर्ष, बैंगलोर

आया था चुपचाप बस थोड़ी देर बाद रोया था,
कुछ दिनों बाद अपने आप में खोया था।
न सुनता किसी की,
न मानता किसी की,
बस अपने ढेर सारे शब्दों को माला में पिरोया था।

इस उम्र में जिज्ञासा हुई पूरे संसार को समझने की
पर किसी ने कुछ बताया नहीं था
बताया भी था तो उसको सही से समझाया नहीं था

- ज्योति, बारहवीं, आधारशिला (म.प्र.)

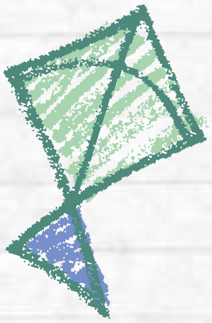

मुर्गी के साथ सैर

मेरे सारे दोस्त बोले, "तुम पागल हो गई हो क्या" जब मैंने अपनी मुर्गी के साथ सैर पर जाने का किस्सा उन्हें सुनाया तो। वह सच में पागलोंवाली ही हरकत थी!

मेरे बाबा पालने के लिए एक मुर्गी लेकर आए थे। वो बहुत मोटी थी। उसका रंग भूरा था। जब सारी चिड़ियाँ और मुर्गियाँ उठती हैं मेरी मुर्गी भी उठ गई। मैंने उसे कुछ आवाज़ करते हुए सुना। वो बाहर जाना चाहती थी। लेकिन इस इलाके में वो नई थी। तो यदि मैं उसे छोड़ देती तो वो गुम हो सकती थी। तभी अचानक मेरे मन में एक ख्याल आया। मैंने कई लोगों को सुबह के समय अपने पालतू कुत्तों को सैर पर ले जाते हुए देखा है। तो मेरे दिमाग में आया कि मैं भी अपनी मुर्गी के साथ सुबह की सैर पर जा सकती हूँ। मेरे पास एक धागा था। मैंने उसे अपनी मुर्गी के पैर में बाँधा। और फिर हम सुबह की सैर पर निकल गए।

रास्ते में सारे लोग हम पर हँस रहे थे। लेकिन हम फिर भी चलते रहे। फिर हम एक खुली जगह में पहुँच गए। वहाँ कुछ मुर्गे-मुर्गियाँ पहले से थे। मेरी मुर्गी ज़मीन में खुरेचकर कुछ खाने लगी। अचानक कुछ मुर्गों ने मेरी मुर्गी पर हमला बोल दिया।

कुछ देर के लिए तो मुझे समझ ही नहीं आया कि यह सब हो क्या रहा है। फिर मैंने कुछ पत्थर उठाए और मुर्गों को मारे। तो वो मुर्गे भाग गए।

लेकिन मेरी मुर्गी बहुत डर गई थी और वो भागने की कोशिश कर रही थी। वो तो उसकी रस्सी मेरे हाथ में थी। तो मैं भी उसके पीछे भागी। किसी तरह मैंने उसे भागने से रोका, अपने हाथों में उठाया और घर वापिस आई।

और उस दिन से मैंने सोच लिया कि मैं अब कभी भी अपनी मुर्गी के साथ सुबह की सैर पर नहीं जाऊँगी।

- सोनाली काकड़े, दसवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान फलटण, महाराष्ट्र

चित्र : हरिओम पाटीदार

जब नटखट देर तक सोए

रमेश उपाध्याय

झटपट और नटखट का स्कूल बड़गाँव में था। बड़गाँव था तो गाँव ही, लेकिन बड़ा गाँव था। वहाँ शहरों जैसी कई चीज़ें थीं। बस अड्डा, रेलवे स्टेशन, बाज़ार, बैंक और डाकघर जैसी चीज़ों के साथ-साथ वहाँ एक नई बस्ती भी थी, जिसमें पक्के मकान थे और उन मकानों में बिजली भी थी। नई बस्ती में रहनेवाले लोग बड़े लोग कहलाते थे। लेकिन बड़गाँव में स्कूल एक ही था, इसलिए उन बड़े लोगों के बच्चे भी उसी में पढ़ते थे। वहाँ रहनेवाले बैंक मैनेजर खन्ना जी का लड़का प्रेम खन्ना नटखट के साथ तीसरी कक्षा में पढ़ता था और उसकी बड़ी बहन गुड्डी झटपट के साथ पाँचवीं कक्षा में।

कक्षाओं में लड़के एक साथ अलग बैठते थे, लड़कियाँ एक साथ अलग बैठती थीं। शायद इसी कारण झटपट और गुड्डी में तो दोस्ती नहीं हुई, पर नटखट और प्रेम खन्ना दोस्त बन गए।

प्रेम पढ़ाई में होशियार था, साफ-सुथरा रहता था, मज़ेदार बातें करता था और खेल-कूद में भी अव्वल रहता था। नटखट उससे बहुत प्रभावित थे और उसके जैसा बनने के लिए उसकी नकल करने की कोशिश करते थे। लेकिन उसकी एक बात नटखट को पसन्द नहीं थी। वह खुद को ऊँचा और दूसरों को नीचा समझता था। वह दूसरों से तू-तड़ाक करता था और बात-बात पर उन्हें बुद्धू, बेवकूफ और कभी-कभी अपनी पंजाबी में खोता भी कह दिया करता था।

एक दिन उसने नटखट से पूछा, “छुट्टी के दिन तू कितने बजे तक सोता है?”

नटखट को उसका “तू” कहना बुरा लगा। उन्होंने उसे तमीज़ सिखाने की सोची। बोले, “पहले आप बताइए, आप कितने बजे तक सोते हैं?”

प्रेम समझ गया कि नटखट “आप” कहकर उसे तमीज़ सिखा रहे हैं। फौरन बराबरी के हम-तुम पर आकर बोला, “हम तो मज़े से आठ-नौ बजे तक सोते हैं। तुम?”

“हम तो घेर में जगार होते ही जग जाते हैं।”

“घेर? तुम अपने घर को घेर कहते हो?”

“नहीं, घर को तो हम घर ही कहते हैं, पर हमारा घर एक घेर में है, जिसमें हमारे दादी-दादा, ताई-ताऊ और चाची-चाचा के भी घर हैं। घेर में दो तरफ हम सबके घर बने हुए हैं। तीसरी तरफ भण्डार है, जिसमें अनाज, दालें, गुड़, शक्कर, तेल जैसी चीज़ें भरी रहती हैं। और एक भूसाघर भी है, जिसमें एक तरफ पशुओं के लिए दाना, भूसा, खली वगैरह और दूसरी तरफ ईंधन भरा रहता है। चौथी तरफ एक कोने में सबका साझा रसोईघर है और दूसरे कोने में हमारी अपनी कुइयाँ।”

“कुइयाँ क्या?” प्रेम समझा नहीं।

नटखट ने समझाया, “छोटे कुएँ को कुइयाँ कहते हैं। गाँव में जो बड़े-बड़े कुएँ हैं, सबके साझे हैं। पर हमारे घेर की कुइयाँ हमारी अपनी है। पीने, नहाने-धोने, खाना पकाने, बर्तन माँजने, घर-आँगन लीपने-पोतने और मवेशियों को पिलाने के लिए हम उसी से खींचकर पानी भरते हैं।”

“मवेशी माने?” प्रेम ने फिर पूछा।

“मवेशी माने पशु। कुइयाँ और रसोईघर के बीच में घेर का दरवाज़ा है और दरवाज़े के पास ही हमारी पौसाल है। पौसाल जानते हो? पशुशाला। हम लोगों

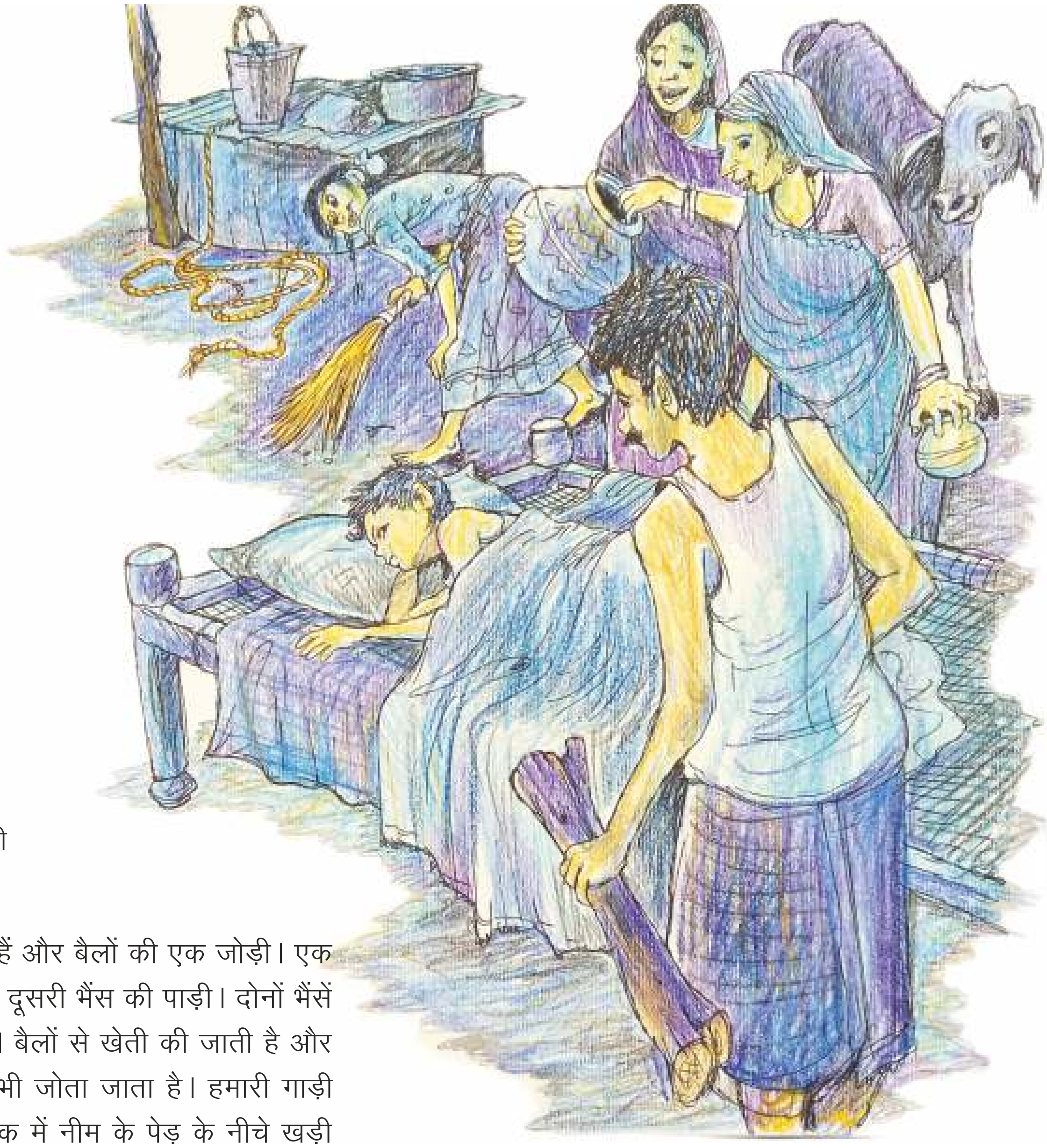

चित्रः प्रशान्त सोनी

के पास दो भैंसे हैं और बैलों की एक जोड़ी। एक भैंस का पाड़ा है, दूसरी भैंस की पाड़ी। दोनों भैंसें खूब दूध देती हैं। बैलों से खेती की जाती है और उनको गाड़ी में भी जोता जाता है। हमारी गाड़ी घर के बाहर चौक में नीम के पेड़ के नीचे खड़ी रहती है। घेर के बाहर हमारी चौपाल है और चौपाल के चबूतरे पर पशुओं के लिए हरा चारा काटने की मशीन लगी हुई है।"

"तुम्हारे घर में कौन-कौन है?" प्रेम ने पूछा।

"माँ, पिता, बड़े भाई झटपट और हम।" नटखट ने बताया और पूछा, "तुम्हारे घर में?"

"मम्मी, पापा, बड़ी बहन गुड्डी और मैं। पापा यहाँ नौकरी करते हैं, इसलिए हम इतने ही यहाँ हैं। हमारे बाकी लोग पंजाब में हैं।"

"छुट्टी के दिन तुम्हारे घर में सभी देर तक सोते हैं?"

"सभी तो नहीं, मम्मी और गुड्डी तो रोज़ की तरह जल्दी उठ जाती हैं। पापा और मैं देर तक सोते हैं।"

"क्यों? देर तक क्यों?"

"पापा कहते हैं – बाकी हर दिन काम का, छुट्टी का दिन आराम का।"

"लेकिन तुम्हारी बड़ी बहन भी तो स्कूल में पढ़ने आती है। वह छुट्टी के दिन देर तक क्यों नहीं सोती? और तुम्हारी मम्मी? उनकी तो कभी छुट्टी होती ही नहीं होगी? वे तो देर तक कभी सो ही नहीं सकती होंगी?"

"औरतें देर तक नहीं सोतीं।"

"हमारे यहाँ तो कोई मर्द भी देर तक नहीं सोता।"

"अच्छा, तुम्हारे यहाँ दूसरों की छुट्टी तो नहीं होती होगी, पर तुम और झटपट तो स्कूल में पढ़ते हो। तुम्हारी तो छुट्टी होती है। तुमको तो छुट्टी के दिन देर तक सोना चाहिए।"

"क्यों? देर तक क्यों सोना चाहिए?"

"मेरे पापा कहते हैं..." प्रेम ने अपने पिता का कथन कविता की तरह सुनायाः

छुट्टी का दिन आराम के लिए होता है

छुट्टी के दिन जो काम करे वो खोता है

नटखट जानते थे कि पंजाबी में खोता गधे को कहते हैं। उन्हें लगा, प्रेम उन्हें खोता कह रहा है। वे परेशान हो गए। स्कूल की छुट्टी हो जाने पर जब वे झटपट के साथ घर लौट रहे थे, उन्होंने झटपट को प्रेम खन्ना के साथ हुई बात बताई और कहा, "कल इतवार की छुट्टी है, हम देर तक सोएँगे।"

"सो पाओगे?" झटपट ने उन्हें समझाया, "प्रेम का क्या है, वह तो नई बस्ती में रहनेवाले बैंक मैनेजर का लड़का है। उसके घर में उसका अपना अलग कमरा होगा। कमरे में बिजली का पंखा चलता होगा। उसका बाप खुद ही देर तक सोता है, तो उसे कोई जगाता भी नहीं होगा। लेकिन तुम कैसे देर तक सो पाओगे? हमारी घेर में तो मुँह अँधेरे ही चहल-पहल शुरू हो जाती है।"

नटखट सोच में पड़ गए। बिचौली खास में बिजली नहीं थी, सो बिजली के पंखे भी नहीं थे। घेर में दादी-दादा और उनके तीनों बेटों-बहुओं के घर अलग थे। पर किसी घर में बच्चों के लिए अलग कमरे नहीं थे। गर्मियों में घेर के सब लोग लम्बे-चौड़े आँगन में चारपाइयाँ डालकर सोते थे। बरसातों में सब अपने-अपने घर के आगे के छप्पर के नीचे ओसारे में और सर्दियों में सब अपने-अपने घर के अन्दर सोते थे। बाकी खाना-पीना, रहना-सहना, घर-बाहर के काम करना सब साझे में होता था। इसलिए घेर में रहनेवाला पूरा कुनबा एक ही घर था, जिसमें कोई भी बड़ा किसी भी छोटे को कुछ भी करने के लिए कह सकता था और न करने के लिए रोक-टोक सकता था। जहाँ मुँह-अँधेरे ही चहल-पहल शुरू हो जाती हो, वहाँ देर तक कोई कैसे सोया रह सकता था?

मगर नटखट पर मानो ज़िद सवार थी। उन्होंने मन को मज़बूत किया और झटपट से कहा, "बड़े, हम तो कल देर तक ही सोएँगे। हमें जगाना मत। घर में और घेर में भी सबसे कह देना कि हमें कोई न जगाए।"

"जो आज्ञा, महाराज!" झटपट ने झट राज़ी होकर हँसते हुए कहा।

अभी सर्दियाँ शुरू नहीं हुई थीं कि घर के अन्दर सोया जाता। लेकिन इतनी गर्मियाँ भी नहीं रह गई थीं कि खुले आँगन में सोया जाए। रात को नटखट और झटपट माता-पिता के साथ अपने घर के बाहरवाले ओसारे में चारपाइयाँ बिछाकर सोए। नटखट प्रण करके सोए कि चाहे कुछ भी हो जाए, वे सुबह देर तक सोएँगे। लेकिन कमाल की बात, और दिनों उन्हें इतनी गहरी नींद आती थी कि सुबह उन्हें जगाना पड़ता था, पर उस दिन मुँह-अँधेरे ही उनकी आँख अपने-आप खुल गई।

आँगन में अभी अँधेरा था, पर कुइयाँ पर कुछ हलचल हो रही थी। रस्सी-बाल्टी से पानी खींचकर लोटों में भरा जा रहा था। नटखट की माँ, दादी, ताई, चाची, तयेरी बहन कँची और चचेरी बहन बाला लोटों में पानी लेकर बाहर जंगल-झाड़े जा रही थीं। वे सब घेर के दरवाज़े के बाहर निकल ही रही थीं कि तभी पौसाल से भैंसों के रँभाने, उनके पाड़ा-पाड़ी के उछल-कूद मचाने और बैलों के गले की घण्टियाँ टुनटुनाने की आवाज़ें आने लगीं। इसके साथ ही दादा के खाँसने और गाने की आवाज़ आईः

उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहाँ जो सोवत है

जो जागत है सो पावत है, जो सोवत है सो खोवत है।

दादा यह गीत रोज़ ही गाते थे। पर आज नटखट को लगा कि जैसे वे उन्हें ही जगाने के लिए गा रहे हैं। लेकिन उन्हें तो आज देर तक सोना था। आँख बन्द किए पड़े रहे। लेकिन दादा के गाने से पूरे घेर में जगार हो गई। कामकाज, बातें, शिकायतें और हिदायतें शुरू हो गईं।

और कोई दिन होता, तो नटखट भी उठ गए होते और झटपट तथा तयेरे-चचेरे भाइयों के साथ बाहर चले गए होते। खेलते-कूदते सब नाले तक जाते। वहाँ की झाड़ियों में दिशा-मैदान से फारिग होकर नाले के तेज़ी-से बहते साफ पानी में हाथ-मुँह धोते और नीम या बबूल की टहनियाँ तोड़कर बनाई गई दातुन से दाँतों को साफ करने के साथ-साथ हँसते-बतियाते घर लौटते।

जागते हुए भी सोए हुए नटखट की बन्द आँखों को सुबह के सुन्दर दृश्य दिखाई दे रहे थे। पूरब के आकाश का लाल होना। सूरज का निकलना। हरियाली पर ओस की बूँदों का चमकना। पोखर के पानी पर सुनहरी किरणों का झिलमिलाना। पेड़ों पर पक्षियों का चहचहाते हुए फुदकना...

नटखट का मन हुआ कि देर तक सोने को गोली मारें और बाहर दौड़ जाएँ। लेकिन प्रण जो कर बैठे थे! पड़े रहे।

पड़े रहे और देखते रहे कि दादा लाठी और पानी से भरा लोटा लेकर बाहर जा रहे हैं। चाचा ने पौसाल का गोबर-कूड़ा समेटकर टोकरे में भर लिया है और टोकरा सिर पर रखकर गोबर-कूड़ा घूरे पर डालने जा रहे हैं। ताऊ भैंसों को सानी-पानी दे रहे हैं और पिता भैंसों का दूध दुहने से पहले उसे गरम करने के लिए बरोसी की राख में दबी आग कुरेदकर उस पर नए उपले रख रहे हैं। उपलों से धुआँ उठ रहा है, जो हवा का रुख इधर होने के चलते नटखट की तरफ आकर उन्हें परेशान कर रहा है। एक भैंस के पाड़े और दूसरी भैंस की पाड़ी को थोड़ी-थोड़ी देर के लिए उनकी माँओं के थनों से लगाकर अलग करके बाँध देने के बाद पिता और ताऊ भैंसें दुहने बैठ गए हैं।

"आज नटखट को क्या हो गया है?" ताऊ पिता से पूछ रहे हैं, "अभी तक सोया क्यों पड़ा है?"

"बड़गाँव के बड़े लोगों की तरह सुबह देर तक सोने का भूत चढ़ गया है इस पर!" पिता हँसते हुए कह रहे हैं, "बड़े ने समझाया, हमने समझाया, इसकी माँ ने समझाया, पर नहीं समझा तो नहीं ही समझा।"

अब दोनों भाई दूध दुह चुके हैं। नटखट के पिता ने दोनों बाल्टियों का दूध हँडिया में भरकर बरोसी की आँच पर रख दिया है और ताऊ ने पाड़ा-पाड़ी को उनकी माँओं के थनों से लगा दिया है कि बाकी बचा दूध वे पेट भर पी लें।

इतने में माँ, दादी, ताई, चाची और तयेरी-चचेरी बहनें जंगल-झाड़े से लौट आई हैं। पिता और ताऊ बाहर चले गए हैं। पूरे घेर पर औरतों का राज हो गया है। नटखट के बारे में बातें हो रही हैं। सबको मालूम है कि नटखट बड़गाँव के बड़े लोगों की नकल कर रहे हैं, इसलिए सब उनको नकलची बन्दर और न जाने क्या-क्या कहकर उनकी हँसी उड़ा रही हैं। नटखट शर्मिंदा हो रहे हैं और चाह रहे हैं कि उठकर बाहर भाग जाएँ। लेकिन उठकर भागते भी शर्म आ रही है, इसलिए चुपचाप पड़े हैं।

कँची घर-आँगन बुहारने लगी है। बाला कुइयाँ के पास पटिया पर बैठकर बर्तन माँजने लगी है। दादी भजन करने से पहले नहा रही हैं। ताई रसोईघर के ओसारे में दही बिलोकर मक्खन और छाछ बनाने में जुट गई हैं। उसी ओसारे में एक तरफ माँ और चाची चक्की चलाने बैठ गई हैं। पता नहीं गेहूँ पीस रही हैं या बाजरा, लेकिन दोनों साथ-साथ चक्की चला रही हैं और सुर में सुर मिलाकर जाँते का गीत गा रही हैं।

नटखट सो नहीं पा रहे थे और पछता रहे थे कि देर तक सोने की ज़िद क्यों की। तभी उन्हें पेट के अन्दर दबाव-सा बनता महसूस हुआ और वे पड़े नहीं रह सके। झटके-से उठे और बाहर भागे। भागे और नाले तक भागते चले गए। वहाँ की झाड़ियों में बैठकर उन्होंने राहत की साँस ली कि ज़रा-सी भी देर और हो जाती, तो आज उनकी चड्डी खराब हो गई होती।

नाले पर आज वे अकेले थे। कोई संग-साथ न हो, तो कोई मज़ा नहीं होता। न कोई खेल-कूद, न कोई बातचीत, न कोई हँसना-हँसाना। बुझे मन से उन्होंने हाथ-मुँह धोया। बबूल की दातुन तोड़ी और उसे चुपचाप चबाते हुए घर लौट आए।

उस दिन पूरे घेर में उनकी ऐसी हँसी उड़ी कि उन्होंने देर तक सोने का विचार हमेशा के लिए त्याग दिया।

अगले दिन स्कूल जाते समय उन्होंने झटपट से कहा, "बड़े, अगर वह प्रेम खन्ना फिर छुट्टी के दिन देर तक सोने की बात करे, तो हम उससे क्या कहें?"

झटपट झट से एक ज़िम्मेदार बड़े भाई की भूमिका में आ गए। उन्होंने नटखट को सुझाव दिया कि वे रोज़ सुबह दादा द्वारा गाया जानेवाला गीत प्रेम को थोड़ा बदलकर सुना दें। नटखट ने पूछा, "कैसे?" तो झटपट बोले, ऐसेः

जो जागता है सो पाता है, जो सोता है सो खोता है

जो देर तलक सोता है, वो तो और भी ज़्यादा खोता है।

फॉर्म-4 (नियम-8 देखिए)

मासिक चकमक बाल विज्ञान पत्रिका के स्वामित्व और अन्य तथ्यों के सम्बन्ध में जानकारी

प्रकाशन का स्थानः भोपाल
प्रकाशन की अवधि : मासिक
प्रकाशक का नाम : अरविन्द सरदाना
राष्ट्रीयता : भारतीय
पता : एकलव्य
ई-10 शंकर नगर, बी.डी.ए. कॉलोनी, शिवाजी नगर
भोपाल 462 016

मुद्रक का नाम : अरविन्द सरदाना
राष्ट्रीयता : भारतीय
पता : एकलव्य
ई-10 शंकर नगर, बी.डी.ए. कॉलोनी, शिवाजी नगर
भोपाल 462 016

सम्पादक का नाम : सुशील शुक्ल
राष्ट्रीयता : भारतीय
पता : एकलव्य
ई-10 शंकर नगर,
बी.डी.ए. कालोनी, शिवाजी नगर
भोपाल 462 016

उन व्यक्तियों के नाम, राष्ट्रीयता और पते जिनका इस पत्रिका पर स्वामित्व है : रैक्स डी. रोज़ारियो
: भारतीय
: एकलव्य
ई-10 शंकर नगर, बी.डी.ए. कॉलोनी,
शिवाजी नगर , भोपाल 462 016

मैं अरविन्द सरदाना यह घोषणा करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

(प्रकाशक के हस्ताक्षर)
अरविन्द सरदाना

20 अगस्त 2016

बासी भात तैयार करना

नासिर अहमद सिकन्दर

रात के पके हुए चावल
यदि बच जाएँ
तो फेंकें न
पानी डालें
रख दें
सुबह तक

सुबह चाहें तो पानी निकाल लें
चाहें तो
रहने दें

अब नमक मिलाएँ
मिर्च यदि हो
तो उसे
स्वादानुसार
बस तैयार
बासी भात

अब स्वाद जानना हो इसका
तो शहर में टेलीफोन के
जो केबल बिछाए जा रहे हैं
और सुबह-सुबह ठेके में
जो मज़दूर आते हैं
वहाँ जाएँ
चखें

उनके एल्यूमिनियम के डिब्बे में
यही मिलेगा आपको।

- साभार *पहल*

चित्रः रोशनी व्याम

RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म.प्र. / भोपाल / 261 / 2015-17

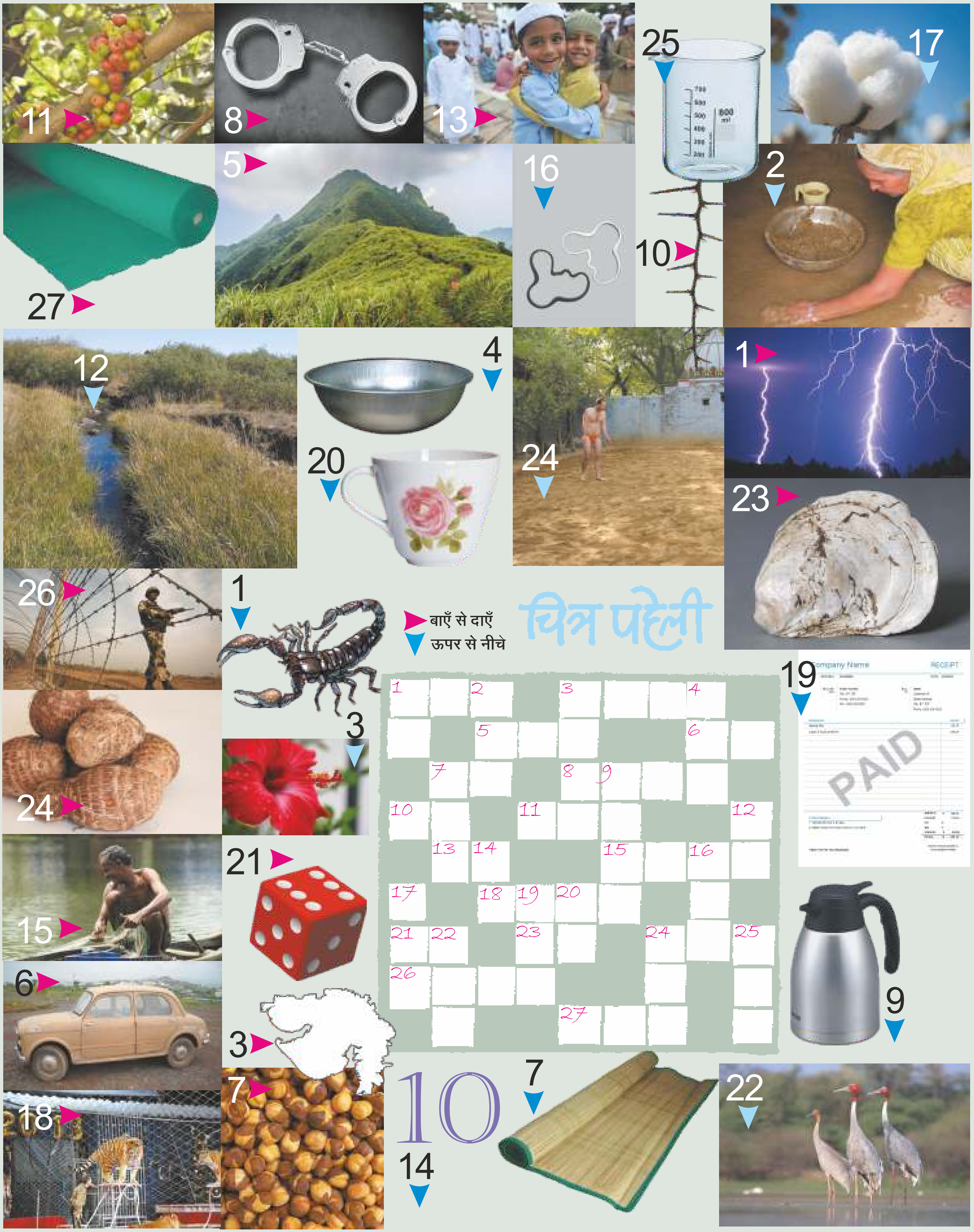

प्रकाशक एवं मुद्रक अरविन्द सरदाना द्वारा स्वामी रैक्स डी रोज़ारियो के लिए एकलव्य, ई-10, शंकर नगर, 61/2 बस स्टॉप के पास, भोपाल 462016, म.प्र. से प्रकाशित एवं आर. के. सिक्युप्रिन्ट प्रा. लि. प्लॉट नम्बर 15-बी, गोविन्दपुरा इंडस्ट्रियल एरिया, गोविन्दपुरा, भोपाल - 462021 (फोन: 0755 - 2687589) से मुद्रित।
सम्पादकः सुशील शुक्ल